वर्ष 10 अंक 12 दिसंबर 2025 पृष्ठ : 40 मूल्य : 50 रूपये

MM
MEDIA MAP
जरूर सब्स्क्राइब करें हमारा डिजिटल प्लेटफार्म
@mediamapnews

मीडिया मैप

उदार जनतंत्र का सजग प्रहरी

जहाँ इतिहास बोलता है –

राष्ट्रवाद, त्याग व नेतृत्व !

डॉ राजेंद्र प्रसाद
जन्मदिवस
3 दिसम्बर

डॉ भीमराव अम्बेडकर
पुण्यतिथि
6 दिसम्बर

चौधरी चरण सिंह
जन्मदिवस
23 दिसम्बर

सरदार वल्लभभाई पटेल
पुण्यतिथि
15 दिसम्बर

अटल बिहारी वाजपेयी
जन्मदिवस
25 दिसम्बर

वी पी सिंह
पुण्यतिथि
27 नवम्बर

मनमोहन सिंह
पुण्यतिथि
26 दिसम्बर

पी.वी. नरसिम्हा राव
पुण्यतिथि
23 दिसम्बर

श्री स्वामी नारायण का प्रथम भव्य मंदिर
अहमदाबाद, गुजरात

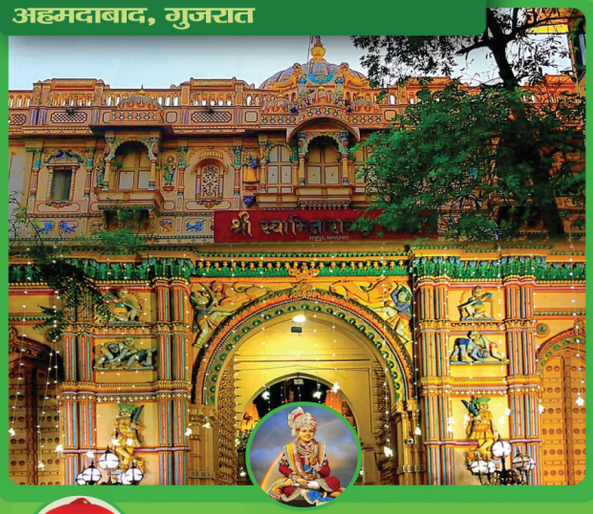

परम पूज्य 1008 आचार्य
श्री कौशलेन्द्र जी महाराज

अखंड भारत की आजादी का

उद्घोष

www.mediamap.co.in
Follow us :

: हम क्यों :

मीडिया मैप एक वैचारिक पत्रिका है। हमारे समाज के नीतिपरक और मूल्यनिष्ठ बिन्दु तथा इनसे जुड़ाव रखने वाले आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक मुद्दे इसकी विषयवस्तु है। मीडिया मैप की संपादकीय नीति उदारवादी, आधुनिक, प्रगतिशील व सर्व धर्म समभाव की भावना पर आधारित है।

मीडिया मैप हमारे बहुलतावादी समाज की विविधताओं से सृजित समस्त सोच, विचार, दृष्टिकोण, मूल्य और मान्यताओं को अपने में समाहित करने का एक प्रयास है। हमारा उद्देश्य वैज्ञानिक सोच द्वारा समाज से जुड़े मूल मुद्दों पर एक प्रबुद्ध जनमत विकसित करना है, जिससे देश में संकुचित मानसिकता और आपसी टकराव से ऊपर उठकर एक उच्चस्तरीय विचार-विमर्श का वातावरण तैयार हो सके।

@mediamapnews
सब्सक्राइब करें हमारा
डिजिटल प्लेटफार्म

मीडिया मैप

उदार जनतंत्र का सजग प्रहरी

संपादकीय सलाहकार मंडल
डॉ. बलदेवराज गुप्त
के.बी. माथुर
डॉ. सलीम खान

प्रधान संपादक
प्रो. प्रदीप माथुर

संयुक्त संपादक : डॉ. सतीश मिश्रा
सहायक संपादक : प्रो. शिवाजी सरकार
विज्ञान व तकनीकी संपादक : राजीव जी
खेल एवं राजनीतिक संपादक : डॉ. मुज़फ्फर गज़ाली

मुख्य प्रबंध संपादक : चन्द्र कुमार
विशिष्ट संपादक : जगदीश गौतम
मुख्य उप संपादक : जितेन्द्र मिश्र
वरिष्ठ उप संपादक : प्रशांत गौतम
कनिष्ठ उप संपादक : अंकुर कुमार

विधि परामर्शदाता : संजय माथुर एडवोकेट

पंजीकृत एवं संपादकीय कार्यालय : 69 ज्ञानखंड-4, इंदिरापुरम, गाजियाबाद- 201014 (उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : 0120- 3248535

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, एवं संपादक प्रदीप माथुर द्वारा- वर्ल्ड विंडो डिजिटल प्रेस, नवयुग मार्केट, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश 201001 से मुद्रित एवं मीडिया मैप प्रकाशन 69-ज्ञानखंड-4, इंदिरापुरम, गाजियाबाद 201014 उत्तर प्रदेश से प्रकाशित।

जन संपर्क अधिकारी मो.- 9810533682

इस पत्रिका से जुड़े सभी पदाधिकारी, लेखकगण व अन्य सहयोगीगण समाज हित में बगैर किसी पारिश्रमिक या वेतन के स्वैच्छिक सेवा प्रदाता हैं।

इस अंक में प्रकाशित समस्त फीचर व समाचार के लेखकों के अपने स्वतंत्र विचार हैं, जिससे स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक का कोई उत्तरदायित्व नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद की स्थिति में क्षेत्रधिकार जिला एवं सत्र न्यायालय गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश होगा।

RNI No. : UPHIN/2016/68336

अनुक्रमणिका

4 संपादकीय : नेताजी सुभाष चंद्र बोस

विचार-प्रवाह : शेख हसीना : भारत के लिए सांप-छछूंदर वाली स्थिति 5-7

8-9 राजनीतिक परिदृश्य : बिहार जनादेश की पड़ताल

बिहार : वोट-सीट असमानता चौंकाने वाली 9-10

11-12 आवरण कथा : नेताजी सुभाष चन्द्र बोस : अधूरी गाथा और अमर प्रेरणा

सुभाष चंद्र बोस : भारत के वास्तविक मुक्तिदाता 12-13

13-14 नेताजी : गीता-प्रेरणा, वैचारिक जटिलताएँ व संघर्ष का ऐतिहासिक यथार्थ

नेताजी सुभाष चंद्र बोस - एक यथार्थ 17

18 नेताजी के अवशेषों को भारत की धरती पर विश्राम मिलना चाहिए

दो राहें, एक लक्ष्य : आज़ादी की निर्णायक बहस 19

22 आवरण कथा : आह... से उपजा होगा... आजादी का... प्रचंड उद्घोष

ममदानी की जीत का असर : शहरों में बढ़ती महंगाई पर सवाल 23-24

25 देश-विदेश : रूस-यूक्रेन युद्ध : शांति की उम्मीदें तेज

द्विपक्षीय संबंधों में ठहराव के बाद फिर उभर रहा है सहयोग का नया अध्याय 26-27

28-29 राष्ट्र निर्माताओं को सादर नमन

मीडिया जगत : संपादकाचार्य, स्वाधीनता सेनानी स्व. के. रामा राव 30-31

34-35 धर्म-दर्शन : भगवान स्वामीनारायण : कलियुग में धर्म-प्रतिष्ठा...

क्रीडा जगत : लगातार प्रदर्शन और कठिन निर्णयों की बात 36

38 हास्य-व्यंग्य : अनेकता में एकता का सूत्रधारक

Email : editor@mediamap.co.in

प्रो. प्रदीप माथुर

संपादकीय

नेताजी सुभाष चंद्र बोस

भारतीय राष्ट्रीय सेना (आईएनए) के सिपाहियों ने सबसे पहले सुभाष चंद्र बोस को नेताजी कहकर संबोधित किया था। नेताजी भारत के गौरवमय स्वतंत्रता संग्राम के उन महानतम नायकों में से एक थे जिन्होंने ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन से मुक्ति के लिए सशस्त्र प्रतिरोध का मार्ग चुना। उनका यह प्रतिरोध 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से प्रारंभ हुई उस प्रक्रिया का चरम था, जो आज़ादी की अंतिम परिणति तक पहुँचने के लिए लगातार सुलगती रही। 1857 के लगभग 85 वर्ष बाद नेताजी का वह ऐतिहासिक आह्वान– 'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा'—इस संघर्ष की पराकाष्ठा था।

बीसवीं सदी के आगमन के बाद महर्षि अरविंद ने हमारे समाज के चेतन को जगाया, महात्मा गांधी ने एक सोई हुई राष्ट्र–चेतना को पुनर्जीवित किया, जवाहरलाल नेहरू ने देश को आधुनिक दृष्टि और इतिहासबोध दिया, सरदार पटेल ने राजनीतिक एकता और प्रशासनिक दृढ़ता प्रदान की और मौलाना आज़ाद ने विद्वत्ता तथा बहुसांस्कृतिकता की आवश्यकता को रेखांकित किया। इसी श्रृंखला में सुभाष बोस ने राष्ट्र को वह अदम्य साहस और तेजस्विता दी, जिसके बल पर इस देश ने विश्व की सबसे शक्तिशाली औपनिवेशिक सत्ता को चुनौती देने का साहस जुटाया। उनका ऊँचा आदर्शवाद केवल उनके समय के युवाओं को ही नहीं, बल्कि दुनिया के उन सभी युवाओं को प्रेरणा देता है जो किसी भी समाज में व्याप्त दमन और अन्याय के विरुद्ध खड़े होने का साहस दिखाते हैं।

कोई भी कृतज्ञ राष्ट्र अपने महान नेताओं को सम्मान देता है और उन्हें लगातार याद करता है। हम भी नेताजी सुभाष बोस जैसे नेताओं को इस परंपरा के तहत याद करते हैं। लेकिन प्राय: यह स्मरण जन्मतिथि और पुण्यतिथि तक सीमित रह जाता है। नेताजी का जन्म जनवरी में हुआ था, लेकिन हम मीडियामैप में इस महीने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं– क्योंकि दिसम्बर में ही उनकी आज़ाद हिन्द फ़ौज ने भारत के एक हिस्से को ब्रिटिश शासन से मुक्त कराया था और उभरते राष्ट्र की आशा का प्रतीक बनी थी।

1947 में स्वतंत्रता मिलने के बाद हमारे देश ने अनेक क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की है। ब्रिटिश हमको विभाजित, कंगाल और पिछड़ा छोड़कर गए थे। स्वतंत्रता के बाद हमारे नेता, प्रशासक और पेशेवर लोग राष्ट्र–निर्माण में तत्पर हुए और परिणामस्वरूप आज भारत लगभग सभी क्षेत्रों में विश्व के शीर्ष पांच देशों में स्थान रखता है। लेकिन इस उल्लेखनीय उपलब्धि के बावजूद कुछ मौलिक कमी आज भी बनी हुई है।

हमारे दार्शनिक–राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहीं लिखा है– 'सब कुछ ठीक है, पर आत्मा गायब है।' दुर्भाग्य से यही स्थिति हमारे वर्तमान समाज की है। हमने अनेक क्षेत्रों में असाधारण प्रगति की है, लेकिन इस दौड़ में हमने अपनी आत्मा–अपनी संवेदनशीलता, अपना चरित्र–कहीं पीछे छोड़ दिया है। लालच, असीम प्रतिस्पर्धा, शक्ति हासिल करने की अंधी दौड़, गरीबों और जरूरतमंदों के प्रति उदासीनता, जातीय और सांप्रदायिक पूर्वाग्रह, सामाजिक तनाव और नैतिक पतन–ये सब मिलकर आज के समाज की वास्तविक तस्वीर पेश करते हैं। ऐसे समय में नेताजी बोस को याद करना, उनके सर्वोच्च बलिदान को स्मरण करना और यह बताना अत्यंत आवश्यक है कि आदर्शवाद कोई उपहास का विषय नहीं बल्कि किसी भी राष्ट्र को वास्तविक महानता तक पहुँचाने की अनिवार्य शर्त है।

दिसम्बर का महीना वैसे भी हमारे कई महान नेताओं के जन्म और पुण्यतिथियों का महीना है–वे सभी जिन्होंने राष्ट्र–निर्माण में अपने–अपने ढंग से महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें संविधान के निर्माता और वंचितों के मुक्तिदाता बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर, एकीकृत भारत के शिल्पकार सरदार पटेल, तथा देश के पूर्व प्रधानमंत्रियों चौधरी चरण सिंह, अटल बिहारी वाजपेयी और डॉ. मनमोहन सिंह शामिल हैं। इस अंक में हम उनके योगदान को भी स्मरण कर रहे हैं, अपने नियमित स्तंभों और विशिष्ट फीचर्स के साथ।

ग्रीष्म की झुलसाती गर्मी और वर्षा की चुनौतियों के बाद शरद ऋतु का आगमन हमारे देश के लिए सुख, शांति और प्रगति का संदेश लेकर आता है।इसी पावन ऋतु में हमारे राजनीतिक इतिहास के अनेक युगनायकों ने जन्म लिया—वे महापुरुष जिन्होंने देश को ब्रिटिश उपनिवेशवाद से मुक्त कराया और आधुनिक भारत की आधारशिला को दृढ़ बनाने में निर्णायक भूमिका निभाई।अपने पूर्ववर्ती अंकों में हमने ऐसी ही कई महान विभूतियों का स्मरण किया है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, लौहपुरुष सरदार पटेल, प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री और इंदिरा गांधी—इन सबके योगदान पर मीडियामैप ने लेख प्रकाशित किए हैं।इस अंक में हम स्वतंत्र भारत के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले प्रमुख जननायकों को विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं। ये महापुरुष हैं— बाबासाहेब भीमराव आंबेडकर, प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद, प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह, चौधरी चरण सिंह, पी. वी. नरसिंह राव, अटल बिहारी वाजपेयी और डॉ. मनमोहन सिंह।मीडियामैप राष्ट्रनिर्माण में इनके विशिष्ट योगदान को संक्षेप में रेखांकित करते हुए सभी को सादर प्रणाम करता है।

शेख हसीना : भारत के लिए सांप-छछूंदर वाली स्थिति

बांग्लादेश के विदेश मंत्रालय द्वारा पूर्व प्रधानमंत्री एवं 'फरार अभियुक्त' शेख हसीना को सौंपने की माँग, जिसे एक ट्राइब्यूनल ने मौत की सज़ा सुनाई है, मोदी सरकार के लिए एक पेचीदा स्थिति-उत्पन्न कर रही है कि वह ढाका की इस मांग को स्वीकार करे या ठुकरा दे।

हसीना के प्रत्यर्पण के लिए आए इस पत्र ने भारत की विदेश नीति के सामने कई गंभीर चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं, क्योंकि यदि भारत इस मांग को अस्वीकार करता है, तो यह निश्चित है कि ढाका चीन-पाकिस्तान गुट की ओर और करीब जाएगा। इसका सीधा अर्थ होगा कि भारत की सीमाएँ अधिक असुरक्षित हो जाएँगी, और आतंकवादी घुसपैठ, नशीले पदार्थों की तस्करी, स्मगलिंग तथा अन्य आपराधिक गतिविधियों में वृद्धि होना तय है।

मोदी सरकार पिछले कई महीनों से हसीना के प्रत्यर्पण के प्रश्न पर टालमटोल करती रही है, लेकिन अब जब उन्हें मौत की सज़ा सुना दी गई है, तो सरकार के विकल्प और सीमित हो गए हैं। यदि भारत प्रत्यर्पण के लिए सहमत होता है तो इसका संदेश जाएगा कि नई दिल्ली ने अपने सबसे भरोसेमंद पड़ोसी मित्रों में से एक को मुश्किल घड़ी में अकेला छोड़ दिया। दोनों ही स्थितियों में केंद्र सरकार कठिन संकट में फँसी दिखाई देती है।

भारतीय अधिकारियों को भेजे गए अपने पत्र में बांग्लादेश के विदेश मंत्रालय ने दोनों देशों के बीच प्रत्यर्पण समझौते का हवाला देते हुए कहा है कि हसीना की वापसी सुनिश्चित करना भारत की 'अनिवार्य जिम्मेदारी' है। यदि नई दिल्ली इसे अस्वीकार करती है, तो इससे दोनों देशों के बीच मौजूदा द्विपक्षीय समझौतों पर प्रश्नचिह्न लग सकता है और ढाका को कई महत्वपूर्ण समझौतों से पीछे हटने का बहाना मिल जाएगा।

बांग्लादेश विदेश मंत्रालय के पत्र में कहा गया है, 'इन व्यक्तियों को, जिन्हें मानवता के विरुद्ध अपराधों में दोषी ठहराया गया है, किसी अन्य देश द्वारा शरण देना अत्यंत अन Friendly act होगा और न्याय की अवहेलना भी।'

मौत की सज़ा पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए हसीना ने अदालत के आरोपों को ख़ारिज किया और कहा कि यह आदेश 'एक मनगढ़ंत ट्राइब्यूनल द्वारा दिया गया है, जिसे एक गैर-निर्वाचित सरकार ने स्थापित किया है जिसका कोई लोकतांत्रिक जनादेश नहीं।' अपने कड़े शब्दों वाले बयान में उन्होंने कहा, 'वे पक्षपाती और राजनीतिक रूप से प्रेरित हैं। मौत की सज़ा की उनकी माँग इस अंतरिम सरकार के चरमपंथी तत्वों की मंशा को उजागर करती है, जिनका उद्देश्य बांग्लादेश की अंतिम निर्वाचित प्रधानमंत्री को समाप्त करना और अवामी लीग को एक राजनीतिक शक्ति के रूप में खत्म करना है।' हसीना ने अपने ईमेल वक्तव्य में लिखा था, 'मैं भारतीय लोगों की आभारी हूँ जिन्होंने मुझे पिछले वर्ष सुरक्षित ठिकाना प्रदान किया।'

कक्षाओं पर गौशालाएँ भारी : विश्वविद्यालयों की प्राथमिकताएँ कहाँ जा रहीं हैं

देश के सर्वोच्च शिक्षण संस्थानों में विचारों की स्वतंत्रता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और अकादमिक बहस को सर्वोपरि माना जाता है। पर दुर्भाग्य से दिल्ली विश्वविद्यालय इन दिनों एक ऐसे विवाद के केंद्र में है जहाँ यह मूल भावना ही हाशिये पर जाती दिख रही है। विश्वविद्यालय प्रशासन द्वारा कॉलेजों को 'गाय और भारतीय संस्कृति' विषयक सम्मेलन में अनिवार्य भागीदारी के निर्देश ने शिक्षकों और छात्रों दोनों में सवाल खड़े कर दिए हैं।

विवाद का मूल मुद्दा यह नहीं है कि गाय भारतीय संस्कृति का अंग नहीं है, बल्कि यह कि क्या एक विश्वविद्यालय का प्राथमिक दायित्व धार्मिक-सांस्कृतिक प्रतीकों को बढ़ावा देना है या वैज्ञानिक सोच को विकसित करना? शिक्षकों का तर्क है कि जिस समय कैंपस लगातार संसाधनों की कमी, अनुसंधान बजट में कटौती, और शिक्षकों की भारी रिक्तियों से जूझ रहा है, उस समय ऐसे सम्मेलन को अकादमिक प्राथमिकता बनाना विश्वविद्यालय की दिशा और उद्देश्य दोनों पर प्रश्न खड़े करता है।

कई शिक्षकों का यह भी आरोप है कि यह पहल शैक्षणिक विमर्श के बजाय 'गौ-राजनीति' को कक्षाओं में लाने का प्रयास है। असहमति जताने वालों को 'असंस्कारी' या 'पशु-विरोधी' कहना स्थिति को और अधिक चिंताजनक बनाता है। किसी भी विश्वविद्यालय की आत्मा विविध मतों, मुक्त बहस और आलोचनात्मक चिंतन में बसती है-न कि एकरूप विचारधारा के प्रचार में।

यह विडंबना ही है कि जो विश्वविद्यालय कभी बौद्धिक नेतृत्व और वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए जाना जाता था, वही आज अकादमिक स्वतंत्रता बनाम धार्मिक सांस्कृतिक प्रतीकवाद के संघर्ष का मैदान बन गया है। यह चलन सिर्फ दिल्ली विश्वविद्यालय तक सीमित रहा तो भी चिंता की बात है, और यदि यह प्रवृत्ति व्यापक हुई तो देश की उच्च शिक्षा की दिशा ही बदल सकती है।

गाय निश्चित ही भारतीय समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा रही है, लेकिन उसे शिक्षा की प्राथमिकताओं पर हावी कर देना विवेक का परित्याग होगा। विश्वविद्यालयों को किसी विचारधारा का प्रवक्ता नहीं, बल्कि स्वतंत्र, प्रश्नाकुल और वैज्ञानिक सोच का पोषक बने रहना चाहिए।

समय की माँग है कि विश्वविद्यालय अपनी मूल भूमिका–तथ्य आधारित अध्ययन, आलोचनात्मक दृष्टि और मुक्त विमर्श–को पुन: स्थापित करें। अन्यथा वह दिन दूर नहीं जब भारत में कक्षाएँ गौशालाओं से कम महत्वपूर्ण मानी जाने लगें।

लोहिया का भारत : समता, स्वतंत्रता और स्वराज का स्वप्न

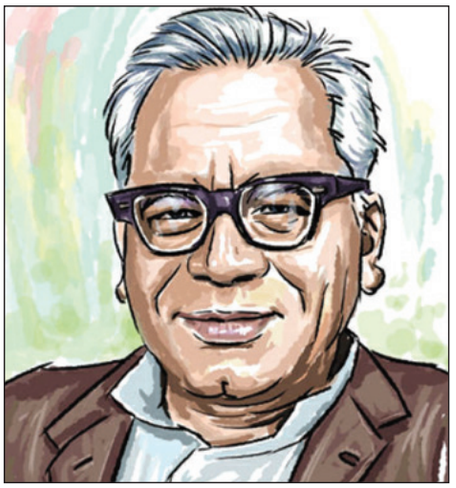

जयपुर से प्रकाशित त्रैमासिक कम्युनिकेशन टुडे और भारती विद्यापीठ, नई दिल्ली द्वारा आयोजित 185वें राष्ट्रीय वेबिनार में 'लोहिया का भारत: समता, स्वतंत्रता और स्वराज का स्वप्न' विषय पर विशेषज्ञों ने विचार साझा किए। वेबिनार में डॉ. राममनोहर लोहिया के समाजवादी चिंतन, सप्त–क्रांति, जाति और लैंगिक समानता, नागरिक स्वतंत्रता और स्वराज जैसे महत्वपूर्ण आयामों पर चर्चा हुई।

माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय की विज़िटिंग फैकल्टी डॉ. शिवा श्रीवास्तव ने कहा कि लोहिया का विचार जितना पढ़ा जाए, उतना ही गहरा होता जाता है। उन्होंने लोहिया की सप्त–क्रांति–स्त्री समानता, जाति–उन्मूलन, रंगभेद विरोध, आर्थिक न्याय, उपनिवेशवाद से मुक्ति, नागरिक स्वतंत्रता और अहिंसा–की समकालीन प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला।

पत्रकारिता एवं जनसंचार के अध्यापक जयंत सिंह तोमर ने लोहिया के विश्व–नागरिकता के विचार, 'पासपोर्ट–रहित दुनिया' की उनकी परिकल्पना और उनकी पत्रिकाओं Mankind तथा Jan के संपादन का उल्लेख किया। उन्होंने गोवा मुक्ति आंदोलन में लोहिया की निर्णायक भूमिका और उनकी प्रसिद्ध चेतावनी– 'संसद आवारा हो जाएगी यदि सड़कें सूनी हो जाएँगी'–को भी याद किया। कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए कम्युनिकेशन टुडे के संपादक प्रो. संजीव भानावत ने कहा कि संघर्ष लोहिया के जीवन का मूल मंत्र रहा। उन्होंने 'चौखंभा राज'–सत्ता के चार स्तरीय विकेंद्रीकरण को लोहिया की ऐतिहासिक देन बताया। कार्यक्रम में सरस्वती वंदना प्रियंका सिंह ने प्रस्तुत की और आभार भी व्यक्त किया। आयोजन में जयंत राठी, पुष्पेंद्र सिंह, डॉ. प्रीति सिंह, डॉ. सुनील कुमार, अंबुश और डॉ. पृथ्वी सेंगर का विशेष सहयोग रहा।

जाति व्यवस्था समाप्त करने के लिए मानसिकता में बदलाव अनिवार्य

'भारत में जाति व्यवस्था इतिहास, संस्कृति और समकालीन समाज–सभी स्तरों पर अब भी गहराई तक व्याप्त है'– यह निष्कर्ष उन समाजशास्त्रियों और विद्वानों का था जिन्होंने 'भारत में जाति व्यवस्था: विशेष संदर्भ दलित समुदाय' विषय पर आयोजित संगोष्ठी को संबोधित किया। यह कार्यक्रम इंस्टीट्यूट ऑफ स्टडी एंड रिसर्च, दिल्ली (ISRD) की नई व्याख्यानमाला के अंतर्गत आयोजित किया गया।

मुख्य वक्ता प्रो. प्रदीप कुमार शिंदे (जेएनयू) ने कहा, 'भारत में जाति का उन्मूलन अत्यंत कठिन है।' उनके अनुसार जाति प्रथा उपनिवेशवाद से पहले भी थी, लेकिन ब्रिटिश प्रशासन ने जनगणना के माध्यम से इसे संस्थागत रूप दे दिया। स्थानीय पहचान धीरे–धीरे सख्त सामाजिक वर्गीकरण में बदल गई जिसने लोगों के खान–पान, विवाह और सामाजिक व्यवहार को निर्धारित किया।

प्रो. शिंदे ने बताया कि डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने 'एनीहिलेशन ऑफ कास्ट' में स्पष्ट कहा था कि जाति का मूल हिन्दू धार्मिक ग्रंथों में है–जबकि इस तरह की अवधारणा इस्लाम या ईसाई धर्म में नहीं मिलती। उन्होंने दावा किया कि भले कुछ समाजशास्त्री अस्पृश्यता के घटने की बात करते हों, लेकिन जमीनी सच्चाई अलग है। 'आज भी दलितों को मंदिर प्रवेश से रोका जाता है, घोड़ी चढ़ने पर हमला किया जाता है और कई जगह अपमान झेलना पड़ता है,' उन्होंने कहा।

राजस्थान, दिल्ली और यूपी की घटनाओं का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि पुलिस और न्यायपालिका जैसी संस्थाएँ भी प्राय: जातीय पूर्वाग्रह दिखाती हैं। 'हाथरस मामला दर्शाता है कि दलितों के लिए एफआईआर दर्ज कराना भी कितना कठिन है।' राजनीति में भी गहरी जातीय विभाजन रेखाएँ मौजूद हैं। उन्होंने कहा कि अब जाति भेदभाव अंतरराष्ट्रीय मुद्दा बन गया है। यूके और अमेरिका में दलित संगठनों की पहल ने इसे वैश्विक चर्चा में ला दिया है। 'सिर्फ 'सभी हिंदू हैं' कह देने से जाति समाप्त हो जाएगी—यह राजनीतिक भ्रम है,' उन्होंने टिप्पणी की। दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. शशि शेखर ने कहा, 'भारत में धर्म बदला जा सकता है, जाति नहीं।' विवाह, सामाजिक प्रतिष्ठा और अधिकारों पर आज भी जाति का गहरा प्रभाव है। शिक्षा और शहरीकरण ने इसे कुछ कमजोर अवश्य किया है, लेकिन गाँवों और

विश्वविद्यालयों के चुनावों में जाति आज भी निर्णायक कारक बनी रहती है। अध्यक्षीय संबोधन में जमाअत-ए-इस्लामी हिंद के सचिव डॉ. मोहम्मद राजीउल इस्लाम नदवी ने कहा कि जाति भेदभाव मिटाने के लिए मानसिकता का परिवर्तन अनिवार्य है। उन्होंने स्पष्ट किया कि मुसलमानों में जाति-चेतना धार्मिक नहीं, बल्कि भारतीय सामाजिक वातावरण का प्रभाव है। इस्लाम, उन्होंने कहा, किसी भी प्रकार की जातिगत श्रेष्ठता नहीं मानता। उन्होंने चेतावनी दी कि केवल कानून बनाने से समस्या हल नहीं होगी। 'मानसिकता बदले बिना कानून बनाना ऐसा ही है जैसे कैंसर के मरीज को दर्दनाशक दे देना,' उन्होंने कहा। आर्थिक प्रगति के बावजूद दलितों को सामाजिक स्वीकार्यता आज भी अक्सर नहीं मिलती। आरंभिक टिप्पणी में जमाअत-ए-इस्लामी हिंद दिल्ली के अध्यक्ष सलीमुल्लाह ख़ान ने कहा कि परस्पर सम्मान तभी संभव है जब लोग एक-दूसरे को सही मायने में समझें। ट्रस्ट्रष्ठ के सचिव आसिफ़ इक़बाल ने बताया कि इस व्याख्यानमाला का उद्देश्य समाज के साथ सार्थक संवाद स्थापित करना है।

जामिया कार्यक्रम में उर्दू की प्रशंसा, पत्रकार ने मंत्री रिजिजू को लिखा खुला पत्र

जामिया मिलिया इस्लामिया के 105वें स्थापना दिवस समारोह में केंद्रीय अल्पसंख्यक कार्य मंत्री किरण रिजिजू द्वारा उर्दू भाषा की प्रशंसा के बाद वरिष्ठ पत्रकार मोहम्मद वजीहुद्दीन ने उन्हें एक खुला पत्र लिखकर उर्दू संरक्षण के लिए कदम उठाने की अपील की है। रिजिजू ने अपने संबोधन में उर्दू को 'दुनिया की सबसे खूबसूरत भाषा' बताया था। इसी टिप्पणी का स्वागत करते हुए वजीहुद्दीन ने पत्र में लिखा कि उर्दू का भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और साहित्य में योगदान अविस्मरणीय है। उन्होंने याद दिलाया कि 1857 में शहीद होने वाले पहले भारतीय पत्रकार मौलवी मोहम्मद बाक़र दिल्ली उर्दू अख़बार से जुड़े थे।

पत्र में उन्होंने यह चिंता भी जताई कि देश में एक वर्ग उर्दू को एक समुदाय से जोड़कर देखता है, जिससे इस भाषा को नुकसान हो रहा है। उनके अनुसार, उर्दू को उसके ही वतन में पराया बना देने की कोशिशें हो रही हैं और सरकारी प्रयासों को भी अक्सर बाधित किया जाता है। पत्रकार ने महाराष्ट्र में मुंबई के प्रस्तावित उर्दू लर्निंग सेंटर परियोजना को रद्द किए जाने का मुद्दा भी उठाया। उन्होंने लिखा कि भवन का लगभग 40 प्रतिशत निर्माण पूरा हो चुका था, लेकिन कुछ विधायकों के विरोध के बाद परियोजना रोक दी गई। उन्होंने रिजिजू से आग्रह किया कि वे राज्य सरकार और बीएमसी से इस निर्णय को वापस लेने का अनुरोध करें। वजीहुद्दीन ने पत्र का समापन उर्दू की मोहकता पर एक शेर के साथ किया- 'वो करे बात तो हर लफ़्ज़ से खुशबू आए...।'

जीवन सार

हमारा समय सच्चे सुख में सफल और दुख में विफल होता है

मानव *जीवन में सफलता का वास्तविक आधार मन की एकाग्रता है। मन को दबाव या हठ से नहीं, बल्कि प्रेम, धैर्य और सही दिशा से एकाग्र बनाया जा सकता है। मन स्वभावत: निष्पाप है, परंतु पुराने संस्कारों और बाहरी आकर्षणों के प्रभाव से वह चंचल हो जाता है। जब मन चंचल होता है तो बुद्धि भी अस्थिर होती है, और ऐसे में किए गए कर्म नए कमजोर संस्कार बनाकर मन को और अधिक आसक्त तथा बुद्धि को अशक्त बना देते हैं।*

यही संकल्प-बुद्धि-संस्कार का चक्र हमें कर्मबंधन में जकड़ता है। मन में सतत चलने वाले संकल्प-विकल्प, मोह-माया और आकर्षणों का यह खेल जितना सूक्ष्म है, उतना ही चुनौतीपूर्ण भी। इसलिए कहा गया- 'मन जीते जग जीत'।

महाभारत में अर्जुन भी इसी दुविधा से गुजर रहा था। उसके पास बाहरी परिस्थितियों से लड़ने की सामर्थ्य थी, परंतु अपने ही मन पर विजय नहीं थी। भगवान श्रीकृष्ण ने उससे कहा- 'मनमान् भव', अर्थात अपना मन ईश्वर में स्थिर करो। यह स्थिरता तभी संभव है जब मन कर्तापन के भाव से मुक्त होकर स्वयं को ईश्वर का निमित्त माने। अर्जुन का मन मोहासक्ति में उलझा था, इसलिए वह संतुलन, शांति और एकाग्रता खो बैठा था। आज भी हमारे भीतर वही द्वंद्व चलता है। कारण यह कि मन प्राय: बाह्यमुखी रहता है- वस्तुओं, व्यक्तियों, संबंधों, इच्छाओं, दुखदायी स्वभावों और सांसारिक बंधनों में उलझा हुआ। जीवन में स्थायी सुख के लिए आवश्यक है कि मन को भीतर की ओर मोड़ा जाए-स्व-चिंतन और प्रभु-चिंतन की ओर। जब मन ईश्वर में सौंप दिया जाता है, तब मोह कमजोर पड़ता है और मन स्थिर होता है।

भगवद्गीता का निर्देश स्पष्ट है- 'योगस्थ: कुरु कर्माणि'- योग में स्थित होकर कर्म करो। और आगे- 'योग: कर्मसु कौशलम्'- योग में रहकर किया कर्म कुशल होता है।

अर्थात, ईश्वर-स्मृति में स्थित होकर कर्म करना ही कर्मयोग है, जिससे सफलता और संतुलन दोनों प्राप्त होते हैं। यही मन-बुद्धि का परमात्मा से मंगल मिलन सहज राजयोग कहलाता है। इससे कर्म भविष्यफल की चिंता से मुक्त होते हैं और जीवन सहज, सरल तथा सार्थक बनता है। गीता में योग का तात्पर्य केवल हठयोग या प्राणायाम नहीं है, बल्कि आत्मा का परमात्मा से प्रेमपूर्ण, सहज और स्वाभाविक संबंध स्थापित करना है। यही परमात्म-स्मृति, ईश्वरीय याद या प्रभु-स्मरण है, जिसके बारे में कहा गया- 'सिमर-सिमर सुख पाओ'।

ब्रह्माकुमार सुशांत

बिहार जनादेश की पड़ताल

प्रो. प्रदीप माथुर

हाल के बिहार चुनाव परिणामों ने विजेताओं और पराजितों- दोनों को गहरी हैरानी में डाल दिया है। यहां तक कि अक्सर बढ़-चढ़कर दावे करने वाले भाजपा नेता भी एनडीए की इस प्रचंड जीत की भविष्यवाणी नहीं कर पाए थे। जनादेश का विश्लेषण कठिन अवश्य है, परंतु इसे समझना आवश्यक भी है।

विपक्षी दलों और कई विश्लेषकों ने एनडीए की जीत को चुनावी अनियमितताओं तथा केंद्र की भाजपा सरकार के दबाव में चुनाव आयोग की कथित पक्षपातपूर्ण कार्यशैली से जोड़कर देखा है। आरोप गंभीर हैं, लेकिन जब तक उन्हें ठोस प्रमाणों के साथ सिद्ध न किया जाए, वे विश्लेषण का आधार नहीं बन सकते। इसलिए हमें आयोग की भूमिका के साथ-साथ मतदाता के मिजाज को भी समझना होगा।

यह कहना भी पूरी तरह गलत नहीं होगा कि चुनाव आयोग की भूमिका पर सवाल उठने लायक परिस्थितियाँ थीं। चुनाव कार्यक्रम तय करने में आयोग ने अपनी स्वतंत्र समझ से अधिक केंद्र सरकार के सुझावों को तरजीह दी। नीतीश सरकार द्वारा चुनाव आचार संहिता के उल्लंघन-नई परियोजनाओं की घोषणाएँ और आर्थिक लाभ बाँटने-को भी आयोग ने नजरअंदाज किया। धनबल के खुले इस्तेमाल और मतदाताओं को बूथ तक पहुँचाने जैसी मनाही पर भी वह कठोर नहीं दिखा।

टी.एन. शेषन के दौर और आज के आयोग की तुलना करें तो स्पष्ट है कि चुनावी मानदंडों को सख्ती से लागू करने की क्षमता और इच्छा दोनों में कमी आई है। चूँकि चुनाव के समय 'फ्रीबी संस्कृति' सत्ता और विपक्ष-दोनों के लिए आम चलन बन चुकी है, ऐसे में आयोग भी अधिक प्रभावी नियंत्रण स्थापित करने की स्थिति में नहीं दिखता।

जमीनी हकीकत और नीतीश सरकार की अपील : मीडिया और विश्लेषकों ने अभियान को राजनीतिक चश्मे से देखने की गलती की और सामाजिक-आर्थिक जमीन को नजरअंदाज किया। राजनीति में उनकी आलोचनाएं हों, परंतु यह तथ्य स्पष्ट है कि नीतीश कुमार ने बिहार को अपेक्षाकृत बेहतर शासन दिया और विकास का एक वातावरण निर्मित किया।

अन्य राज्यों की तुलना में बिहार अभी भी पिछड़ा है, परंतु दशकों की गरीबी और शोषण झेल चुके आम जनता के लिए नीतीश सरकार आशा का आधार बनी। शराबबंदी के कारण वे विशेष रूप से महिलाओं के बीच लोकप्रिय हुए। चुनाव से ठीक पहले महिलाओं को आत्मनिर्भरता के लिए 10,000 रुपये की सहायता देने की घोषणा तथा वृद्ध पेंशन को 500 से बढ़ाकर 1100 रुपये करना-दोनों ने एनडीए को सीधे लाभ पहुँचाया।

महागठबंधन की रणनीतिक गलतियां : महागठबंधन (एमजीबी) नैतिक रूप से मज़बूत मुद्दे उठा रहा था- बेरोजगारी, छात्रों की समस्याएं, ओबीसी अधिकार, दलित और मुस्लिम समुदाय की आवाज-परंतु राजनीतिक रणनीति और प्रबंधन में वह भाजपा की बराबरी नहीं कर पाया। प्रशांत किशोर और असदुद्दीन ओवैसी भाजपा की 'बी टीम' थे या नहीं, यह बहस का विषय है, परंतु यह स्पष्ट है कि उनकी मौजूदगी ने एमजीबी को भारी नुकसान पहुँचाया।

प्रशांत किशोर ने युवा और शिक्षित उदारवादी वर्ग के बीच महागठबंधन के प्रभाव को कमजोर किया। ओवैसी ने मुस्लिम वोट बैंक को काट दिया, जो परंपरागत रूप से आरजेडी के साथ था। दोनों ही सीमित सीटें जीत पाए, मगर एमजीबी के वोटों में सेंध लगाने में सफल रहे। आरजेडी और कांग्रेस को यह पहले ही समझ लेना चाहिए था और रणनीति बदलनी चाहिए थी।

दूसरी बड़ी गलती तेजस्वी यादव को मुख्यमंत्री चेहरे के रूप में घोषित करना थी। औसत मतदाता की नजर में वे

प्रशांत किशोर और असदुद्दीन ओवैसी भाजपा की 'बी टीम' थे या नहीं, यह बहस का विषय है, परंतु यह स्पष्ट है कि उनकी मौजूदगी ने एमजीबी को भारी नुकसान पहुँचाया। प्रशांत किशोर ने युवा और शिक्षित उदारवादी वर्ग के बीच महागठबंधन के प्रभाव को कमजोर किया। ओवैसी ने मुस्लिम वोट बैंक को काट दिया, जो परंपरागत रूप से आरजेडी के साथ था। दोनों ही सीमित सीटें जीत पाए, मगर एमजीबी के वोटों में सेंध लगाने में सफल रहे। आरजेडी और कांग्रेस को यह पहले ही समझ लेना चाहिए था और रणनीति बदलनी चाहिए थी। दूसरी बड़ी गलती तेजस्वी यादव को मुख्यमंत्री चेहरे के रूप में घोषित करना थी। औसत मतदाता की नजर में वे अनुभवहीन और नीतीश कुमार की तुलना में कमजोर दिखाई दिए। इससे भाजपा को 'लालू के जंगलराज' को चुनावी मुद्दा बनाने का अवसर मिला, जिसने मध्यवर्ग और बुजुर्ग मतदाताओं को प्रभावित किया और नीतीश शासन को अपेक्षाकृत बेहतर विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया।

अनुभवहीन और नीतीश कुमार की तुलना में कमजोर दिखाई दिए। इससे भाजपा को 'लालू के जंगलराज' को चुनावी मुद्दा बनाने का अवसर मिला, जिसने मध्यवर्ग और बुजुर्ग मतदाताओं को प्रभावित किया और नीतीश शासन को अपेक्षाकृत बेहतर विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया। यह घोषणा महागठबंधन के उस चुनावी माहौल पर भारी पड़ी जो उसे जीत के करीब ला रहा था।

राहुल गांधी और ओबीसी राजनीति : अक्सर आलोचना का निशाना बनने वाले राहुल गांधी ने महात्मा गांधी-शैली का संयम और आदर्शवाद दिखाते हुए ओबीसी वर्ग को राजनीतिक प्रतिनिधित्व देने की दिशा में ठोस कदम उठाए। उन्होंने बड़ी संख्या में ओबीसी उम्मीदवारों को टिकट दिलाकर सामाजिक विस्तार का प्रयास किया। परंतु यह कदम ऊँची जातियों के निहित स्वार्थों के लिए असहज करने वाला था। परिणामस्वरूप, उन्होंने कांग्रेस और इन उम्मीदवारों को हराने के लिए सामाजिक स्तर पर सक्रिय भूमिका निभाई।

ध्रुवीकरण का प्रभाव : गतिशील राजनीति में ज्योतिषीय भविष्यवाणियों के लिए अक्सर स्थान नहीं बचता, परंतु कई लोग मानते थे कि एमजीबी 'ग्रह-अवरोध' के दौर से गुजर रहा है और जीत की संभावना कम है। पुरानी दिल्ली बम विस्फोट ने दूसरे चरण में मतदान को

प्रभावित किया और बहुसंख्यक समुदाय का ध्रुवीकरण भाजपा और एनडीए के पक्ष में बढ़ गया। एमजीबी अपने पारंपरिक मजबूत क्षेत्रों में भी पराजित हुआ।

एक सकारात्मक संकेत : इन सबके बावजूद बिहार चुनावों ने भारतीय लोकतंत्र के लिए एक सकारात्मक संदेश दिया है। पहली बार राज्य के मतदाताओं ने जातीय समीकरणों से ऊपर उठकर मतदान करने का स्पष्ट संकेत दिया है- जबकि बिहार को अब तक जाति-आधारित राजनीति का प्रयोगशाला माना जाता रहा है। यह परिपक्वता का उभरता संकेत है, जिसे गैर-सांप्रदायिक और धर्मनिरपेक्ष दल-कांग्रेस, टीएमसी, एनसीपी, डीएमके और आम आदमी पार्टी-भुना सकते हैं।

दरअसल, भाजपा के हिंदुत्व-आधारित राजनीतिक सिद्धांत और पूँजी-घनिष्ठ आर्थिक ढाँचे में परिवर्तन की संभावना कम है। ऐसे में व्यापक सामाजिक आधार वाली पार्टियों के लिए आगे बढ़ने का अवसर उपलब्ध हुआ है।

■■■■

बिहार : वोट-सीट असमानता चौंकाने वाली

शिवाजी सरकार

एनडीए की अप्रत्याशित 202 सीटों की जीत-जो एग्ज़िट पोल अनुमानों से कहीं ऊपर रही-ने हिल चुके शेयर बाज़ार को सहारा दिया है, लेकिन साथ ही बिहार की आर्थिक स्थिरता और इस राजनीतिक एकाधिकार के भविष्यगत परिणामों पर नए सिरे से बहस भी छेड़ दी है। चुनावी प्रचार में गरीबी प्रमुख मुद्दा बनी रही, जबकि बिहार की जड़ता से ग्रस्त अर्थव्यवस्था के ढांचागत सवाल लगभग अनछुए रह गए।

सबसे बड़ा आश्चर्य वोट और सीटों के बीच असमानता है। आरजेडी को सर्वाधिक 22.1 प्रतिशत वोट-कुल 1.13 करोड़-मिले, पर सीटें सिर्फ 27 आईं। इसके उलट भाजपा को 20.7 प्रतिशत वोट (99 लाख) के साथ 89 सीटें मिलीं और जदयू को 18.9 प्रतिशत (95 लाख) वोट पर 85 सीटें। कांग्रेस को 43 लाख वोट पर 6 सीटें, जबकि एलजेपी-आरवी को 25 लाख वोट पर 19 सीटें मिलीं। ऐसे भारी अंतर की मिसाल महाराष्ट्र के पिछले विधानसभा चुनावों में भी दिखी थी, जब भाजपा ने 189 सीटें लड़कर 132 जीती थीं।

इस विसंगति ने राजनीतिक पर्यवेक्षकों को हैरान कर दिया है। विपक्ष भी चुनाव आयोग की भूमिका पर सवाल उठा रहा है। कांग्रेस प्रवक्ताओं-जिनमें पवन खेड़ा भी शामिल हैं-ने 'सिस्टमेटिक अनियमितताओं' की ओर संकेत किया है। कुछ बूथों पर ईवीएम को लेकर कांग्रेस ने विरोध दर्ज किया। फोर्ब्सगंज में झड़प की घटना के बाद अंतत: कांग्रेस प्रत्याशी की जीत हुई।

चुनावी नतीजों की यह अनोखी तस्वीर आने वाले चुनावों, खासकर क्षेत्रीय दलों के लिए, चिंता का संकेत मानी जा रही है-विशेष रूप से ऐसे समय में जब प्रधानमंत्री बंगाल में 'जंगलराज खत्म करने' की चेतावनी दे चुके हैं। कानून-व्यवस्था को लेकर भी चिंता बनी हुई है-मोकामा हत्याकांड और आरोपित आनंद सिंह की चुनावी जीत इसका उदाहरण है। बीस वर्षों के 'सुशासन' के बावजूद बिहार में ठोस आर्थिक परिवर्तन नहीं दिखता।

नीतीश कुमार की नकद सहायता योजनाएँ- जैसे महिलाओं के लिए 10,000 रुपये की सहायता-चुनावी रूप से तो कारगर रहीं, परंतु वे राज्य की संरचनात्मक कमजोरियों की भरपाई नहीं कर सकतीं।

उधर आरजेडी-कांग्रेस महागठबंधन के महिला-केंद्रित कार्यक्रम भी प्रभावी रहे। उनका दावा है कि जितनी महिलाएँ नीतीश के पक्ष में थीं, लगभग उतनी ही उनके विरोध में भी। आने वाला राष्ट्रीय राजनीतिक परिदृश्य अधिक अस्थिर हो सकता है।

यदि नीतीश कुमार मुख्यमंत्री बने रहते हैं, तो आर्थिक स्थितियाँ सुधारना आसान नहीं होगा। उनके सहयोगी भाजपा ने चुनाव से पहले कई बार उनके स्वास्थ्य और नेतृत्व पर सवाल उठाए थे।

बाज़ार उत्साहित, ज़मीनी हकीकत कठोर : वित्तीय विश्लेषकों ने इस निर्णायक जीत को बाज़ार के लिए सकारात्मक माना है। गोल्डमैन सैक्स ने भारत को 'ओवरवेट' रेटिंग दी है। कॉरपोरेट परिणाम भी उत्साहजनक हैं। मार्सेलस इन्वेस्टमेंट मैनेजर्स का मत है कि 'सबसे बुरा दौर बीत चुका है।'

लेकिन बिहार की सूक्ष्म अर्थव्यवस्था दशकों से निवेशकों को आकर्षित नहीं कर पाई। ऐतिहासिक पिछड़ेपन और निवेश की कमी मुख्य कारण रहे हैं। हाल के वर्षों में बिहार की जीएसडीपी वृद्धि सर्वभारत औसत से अधिक रही है, लेकिन कम आधार के कारण इसका प्रभाव सीमित है।

2025-26 में राज्य का पूंजीगत व्यय कुल बजट का मात्र 14 प्रतिशत है- जो पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और झारखंड जैसे समान आय वाले राज्यों से कहीं कम है।

रोज़गार के अभाव- 15-29 आयु वर्ग में 9.9 प्रतिशत बेरोज़गारी (यूपी के 9.1% से अधिक)- की वजह से बड़े पैमाने पर पलायन जारी है। ई-श्रम पोर्टल पर पंजीकृत 3.16 करोड़ बिहारी, यूपी के बाद दूसरे स्थान पर हैं।

बढ़ती आय-विषमता : बिहार का जीएसडीपी अब भी सबसे कम है। औद्योगिक राज्यों से इसकी दूरी बढ़ती गई है। 2011-12 में बिहार की जीडीपी तमिलनाडु की 34%, गुजरात की 43% और कर्नाटक की 41% थी। 2021-22 में ये अनुपात घटकर क्रमश: 32%, 35% और 33% रह गए।

प्रति व्यक्ति एनएसडीपी भी देश में सबसे कम है—1960-61 में यह राष्ट्रीय औसत का 70% था, 2005-06 तक गिरकर 33% रह गया, और आज भी लगभग वहीं है।

2017-18 से 2022-23 के बीच कृषि कार्यबल 1.25 करोड़ से बढ़कर 1.9 करोड़ हो गया-50 प्रतिशत वृद्धि। महामारी के दौरान लौटे प्रवासी, स्थानीय उद्योगों के बंद होने और अनौपचारिक क्षेत्र में गिरावट इसके कारण हैं। अधिकांश लोग कम-उपज वाले खेती-किसानी में लौटे हैं-जो मजबूत अर्थव्यवस्था का संकेत नहीं।

निवेश न्यूनतम : निर्माण क्षेत्र में-1.1% की गिरावट आई है। बिहार में देश की औद्योगिक इकाइयों का सिर्फ 1.32% है और राष्ट्रीय फैक्टरी मूल्य संवर्धन में इसका हिस्सा मात्र 0.5%।

ईज़ ऑफ़ डूइंग बिज़नेस में यह 29 में से 26वें स्थान पर है। एफडीआई का इसका हिस्सा केवल 0.29% है। निर्यात में भागीदारी 0.52%—और दस भू-अवलंबित राज्यों में यह नौवें स्थान पर है।

सामाजिक संकेतक : अधिकांश मानव विकास सूचकांकों में बिहार सबसे नीचे है। नीति आयोग के 2024 एसडीजी सूचकांक में यह अंतिम पायदान पर है। कुपोषण, शिशु मृत्यु दर, स्वच्छता-सभी में स्थिति अत्यंत कमजोर है। 60,000 से अधिक स्वास्थ्य पद खाली हैं। गुड गवर्नेंस इंडेक्स में बिहार 18 में से 15वें स्थान पर है।

कुछ उजले पक्ष : स्वच्छ जल और स्वच्छता (SDG-6) में बिहार तीसरे स्थान पर है। बिहार नेक्स्ट-जेन लैब जैसी पहलें डेटा-आधारित प्रशासन की दिशा में संकेत देती हैं।

नीतीश कुमार की मिश्रित विरासत : नीतीश कुमार ने आरजेडी के 'जंगलराज' के बाद कानून-व्यवस्था को पटरी पर लाया। अपहरण, रंगदारी और अपराध में कमी आई। लेकिन आर्थिक विकास, रोज़गार, निवेश और गरीबी उन्मूलन में उनका प्रदर्शन निराशाजनक रहा। राजनीतिक रूप से अब वे मजबूत स्थिति में हैं, और विपक्ष बिखरा हुआ है। लेकिन बिहार को पिछड़ेपन से निकालने की जिम्मेदारी वही है, जिसे वे पिछले 20 वर्षों में पूरा नहीं कर सके।

उनके धन्यवाद संदेश में कोई ठोस विकास-रोडमैप नहीं था। बिहार अब नई राह चुनेगा या नहीं-यह सवाल खुला है, और देश की नज़र इस पर टिकी है।

(लेकक प्रो. शिवाजी सरकार, वरिष्ठ पत्रकार और मीडिया कार्यकर्ता वित्तीय रिपोर्टिंग में विशेषज्ञ हैं)

♦♦

सबसे बड़ा आश्चर्य वोट और सीटों के बीच असमानता है। आरजेडी को सर्वाधिक 22.1 प्रतिशत वोट-कुल 1.13 करोड़-मिले, पर सीटें सिर्फ 27 आईं। इसके उलट भाजपा को 20.7 प्रतिशत वोट (99 लाख) के साथ 89 सीटें मिलीं और जदयू को 18.9 प्रतिशत (95 लाख) वोट पर 85 सीटें। कांग्रेस को 43 लाख वोट पर 6 सीटें, जबकि एलजेपी-आरवी को 25 लाख वोट पर 19 सीटें मिलीं। ऐसे भारी अंतर की मिसाल महाराष्ट्र के पिछले विधानसभा चुनावों में भी दिखी थी, जब भाजपा ने 189 सीटें लड़कर 132 जीती थीं। इस विसंगति ने राजनीतिक पर्यवेक्षकों को हैरान कर दिया है। विपक्ष भी चुनाव आयोग की भूमिका पर सवाल उठा रहा है। कांग्रेस प्रवक्ताओं-जिनमें पवन खेड़ा भी शामिल हैं-ने 'सिस्टमेटिक अनियमितताओं' की ओर संकेत किया है। कुछ बूथों पर ईवीएम को लेकर कांग्रेस ने विरोध दर्ज किया। फोर्ब्सगंज में झड़प की घटना के बाद अंततः कांग्रेस प्रत्याशी की जीत हुई। चुनावी नतीजों की यह अनोखी तस्वीर आने वाले चुनावों, खासकर क्षेत्रीय दलों के लिए, चिंता का संकेत मानी जा रही है-विशेष रूप से ऐसे समय में जब प्रधानमंत्री बंगाल में 'जंगलराज खत्म करने' की चेतावनी दे चुके हैं।

♦♦

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस : अधूरी गाथा और अमर प्रेरणा

चंद्र कुमार एडवोकेट

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अनेक महापुरुषों ने अपने बलिदान और संघर्ष से राष्ट्र को दिशा दी, परंतु नेताजी सुभाष चन्द्र बोस का नाम उनमें सबसे अग्रणी और सबसे प्रेरक है। वे केवल एक राजनेता या सैन्य नेता नहीं थे, बल्कि वे भारतीय आत्मसम्मान और स्वाभिमान के सबसे प्रबल प्रतीक बनकर उभरे। उनका जीवन त्याग, संकल्प और राष्ट्रभक्ति का असाधारण उदाहरण है। नेताजी ने वह सब कुछ छोड़ दिया, जिसे आम मनुष्य जीवन की सफलता मानता है- प्रतिष्ठित करियर, पारिवारिक सुख, आर्थिक स्थिरता-सब कुछ राष्ट्र के लिए बलिदान कर दिया। उनका सपना केवल स्वतंत्र भारत का नहीं था, बल्कि एक ऐसा भारत, जहाँ हर नागरिक सम्मान, समानता और आत्मगौरव के साथ जी सके।

अंडमान में स्वतंत्रता की घोषणा-इतिहास का अविस्मरणीय क्षण : 30 दिसम्बर 1943 को नेताजी ने वह ऐतिहासिक घोषणा की, जिसने स्वतंत्रता आंदोलन को नई दिशा दी। अंडमान-निकोबार द्वीपों में उन्होंने भारत की स्वतंत्रता की घोषणा की-वह भी तब, जब भारत औपचारिक रूप से अभी ब्रिटिश शासन के अधीन था। यह केवल एक घोषणा नहीं थी; यह औपनिवेशिक शासन को खुली चुनौती थी। अंडमान के वे द्वीप, जिन्हें 'काला पानी' की यातना के लिए कुख्यात किया गया था, उसी धरती से नेताजी की आवाज गूँजी-यह प्रतीकात्मक विजय थी, जिसने हर भारतीय के अंदर स्वतंत्रता की नई लहर पैदा की। आज भी अंडमान का वह ऐतिहासिक स्थल नेताजी के साहस और दृष्टि की याद दिलाता है।

नेताजी का अंतिम अध्याय-रहस्य और मौन का अद्भुत संगम : 18 अगस्त 1945-यह तिथि भारतीय इतिहास की सबसे रहस्यमयी तारीखों में से एक है। कथित रूप से ताइहोकू (ताइपे) में एक विमान दुर्घटना हुई और दुनिया को बताया गया कि नेताजी की मृत्यु हो गई। परंतु यह घोषणा जितनी सरल प्रतीत हुई, उतनी ही गहरी आशंकाओं, सवालों और विवादों से घिरी रही।

भारत से हजारों मील दूर जापान के टोक्यो में स्थित रेंकोजी मंदिर आज भी इस कथा का मौन साक्षी है। मंदिर में सुरक्षित वह कलश-जिसमें नेताजी के अस्थि-अवशेष होने का दावा किया जाता है-आज भी अनगिनत भारतीयों को विचलित करता है।

हर वर्ष 18 अगस्त को जापान और भारत के नागरिक वहाँ एकत्र होकर श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। परंतु इस श्रद्धांजलि के बीच एक अधूरा सवाल गूँजता है-क्या नेताजी वास्तव में वहीं चिता पर विलीन हुए थे?

जाँच समितियाँ, रिपोर्टें और अनसुलझे प्रश्न : स्वतंत्र भारत में नेताजी की मृत्यु की सच्चाई जानने के लिए तीन प्रमुख जाँचें हुईं-

- शाह नवाज़ समिति (1956)- इसने निष्कर्ष निकाला कि नेताजी विमान हादसे में शहीद हुए।
- खोसला आयोग (1970)- इसने भी विमान हादसे की पुष्टि की।
- मुखर्जी आयोग (2005)- इसने पूरी तरह अलग निष्कर्ष दिया- नेताजी विमान दुर्घटना में नहीं मरे।

इस आयोग ने रेंकोजी मंदिर में रखी अस्थियों को भी नेताजी का नहीं माना। रेंकोजी मंदिर के पुजारियों ने कई बार कहा है-'भारत नेताजी की अस्थियों को

जापान : रेनकोजी मंदिर से मेरा साक्षात्कार

26 नवंबर की सुबह, हम टोक्यो में एक बेहद बारिश भरे और उदास दिन में जागे! लेकिन मैंने अपने दो अच्छे मित्रों, चंद्र बोस और श्रीधर कृष्ण, से वादा किया था कि जापान यात्रा के दौरान मैं रेनकोजी मंदिर जाकर हमारे महान नेता नेताजी को श्रद्धांजलि अर्पित करूंगा।

खराब मौसम भी हमें- मुझे और मेरे दोस्तों को- इस रोमांचक यात्रा पर निकलने से रोक नहीं सका। जहाँ हम ठहरे थे वहाँ से यह स्थान काफी दूर था, और भाषा की भारी दिक्कतें (क्योंकि हमें लगा कि आम तौर पर जापानी लोग अंग्रेजी नहीं जानते) भी थीं। फिर भी, हम टोक्यो के उपनगरीय क्षेत्र की एक मध्यमवर्गीय आवासीय बस्ती के बीच स्थित उस शांत और सुंदर रेनकोजी मंदिर पहुँच गए। रेनकोजी एक बौद्ध मंदिर है। यही वह पवित्र स्थान है जहाँ 18 सितंबर 1945 से हमारे महानायक नेताजी सुभाष चंद्र बोस की अस्थियाँ संरक्षित हैं। 1594 में स्थापित यह छोटा, सुंदर और अच्छी तरह संरक्षित मंदिर धन और सुख के देवता की प्रेरणा से बनाया गया था। यह बौद्ध धर्म के निचिरेन संप्रदाय से संबंध रखता है, जिसका विश्वास है कि मानव मुक्ति केवल लोट्स सूत्र में निहित है।

मुख्य पुजारी उस समय मौजूद नहीं थे, लेकिन उनकी पुत्रवधू हीरोमी इनोद्रेजाकी हमारे प्रति अत्यंत दयालु थीं। सामान्यतः वे अचानक आने वाले आगंतुकों को अनुमति नहीं देते, फिर भी उन्होंने हमारे लिए मंदिर का द्वार खोल दिया, और हमें वह अद्भुत, रोमांचक अनुभव प्राप्त हुआ- उस कलश के सामने श्रद्धा से झुकने का जिसमें नेताजी की अस्थियाँ रखी हुई हैं। मंदिर के अंदर फोटोग्राफी की अनुमति नहीं थी। मुझे नहीं पता कि मुझे क्या हो गया... मेरी आँखों से आँसू बहने लगे, शरीर ठंडा पड़ने लगा-मुझे वहाँ से निकलने का मन ही नहीं कर रहा था। यदि वास्तव में वे ही हैं, तो वे वहाँ एक विदेशी भूमि में, एक कलश के भीतर, कितने अकेले होंगे।

- रेंकोजी से गोपा बनर्जी राष्ट्रभक्त का मार्मिक संदेश

सम्मानपूर्वक वापस ले जाए। यही उचित होगा।' परंतु भारत सरकारें अब तक इस कदम को उठाने से कतराती रही हैं। कारण स्पष्ट है- अस्थियाँ वापस लाई गईं, तो इतिहास की कुछ बंद फाइलें खुल सकती हैं, जिनसे स्वतंत्रता आंदोलन और विभाजन राजनीति के कई अध्याय नए सिरे से लिखने पड़ेंगे।

एक महानायक की प्रतिध्वनि - जो आज भी सुनाई देती है : नेताजी की आवाज, उनका ओज, और उनका विश्वास आज भी हर भारतीय को प्रेरित करता है।

'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा'- यह केवल नारा नहीं था, यह राष्ट्र की आत्मा को जगाने वाला घोष था।

उनकी एक और पंक्ति, जो उन्होंने अपने देशवासियों के लिए कही थी- 'जल्द मुझे अपनी धरती माँ भारती की कोख में, माँ गंगा की गोद में ले चलो...' इन शब्दों में निर्वासन की पीड़ा, देशप्रेम की तीव्रता और मातृभूमि का आकर्षण स्पष्ट दिखाई देता है। नेताजी के जीवन का यह संघर्ष हमें बताता है कि स्वतंत्रता केवल अधिकार नहीं, बल्कि निरंतर त्याग की मांग करती है।

आजाद हिन्द फ़ौज - भारतीयों को आत्मविश्वास देने वाली सेना : नेताजी की सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक थी-आजाद हिन्द फ़ौज का पुनर्गठन और संचालन। इस सेना ने भारतीयों को यह विश्वास दिलाया कि वे केवल विरोध करने वाले नागरिक नहीं, बल्कि हथियार उठाकर स्वतंत्रता प्राप्त करने वाले योद्धा भी बन सकते हैं।

ब्रिटिश प्रधानमंत्री क्लेमेंट एटली ने बाद में स्वीकार किया कि आज़ाद हिन्द फ़ौज की गतिविधियों और भारतीय नौसेना के विद्रोह ने ब्रिटेन को यह स्पष्ट कर दिया कि भारत पर शासन अब असंभव है। इस प्रकार नेताजी का योगदान प्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रता के अंतिम चरण का निर्णायक कारक बना।

रेंकोजी मंदिर की दीवारें—एक शांत पुकार : टोक्यो का वह शांत, सुसज्जित और पवित्र मंदिर आज भी प्रतीक्षा कर रहा है।

वहाँ लगी नेताजी की तस्वीर, 'भारत माता की जय' का पट्टा, और वार्षिक श्रद्धांजलि समारोह की गंभीरता हमें यह स्मरण कराती है कि- हम अब भी अपने महानायक को अंतिम सम्मान देने से वंचित हैं। मंदिर की हर दीवार जैसे कहती है— 'क्या भारत अपने असली इतिहास का सामना करने के लिए तैयार है?'

समापन - सत्य की जीत, स्मृति का सम्मान : नेताजी की मृत्यु चाहे जितनी रहस्यमयी हो, पर उनका जीवन और योगदान निर्विवाद है। वे केवल स्वतंत्रता सेनानी नहीं थे; वे वह शक्ति थे, जिसने भारतीयों में आत्मसम्मान जगाया। सच को अनंत समय तक छुपाया नहीं जा सकता। भारत को उस दिन का इंतजार है, जब नेताजी की अस्थियों का सम्मानजनक स्वागत उनकी मातृभूमि में होगा और इतिहास अपनी अंतिम पंक्ति स्वयं लिखेगा। नेताजी हमें यह संदेश देकर जाते हैं- 'राष्ट्र पहले है, और राष्ट्र के लिए हर त्याग छोटा है।'

उनकी अमर गाथा आज भी हमें प्रेरित करती है और करती रहेगी- जब तक भारत है, भारत के हृदय में नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की स्मृति अमर रहेगी।

सुभाष चंद्र बोस : भारत के वास्तविक मुक्तिदाता

भारत के मुक्तिदाता नेताजी को सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम उनके सिद्धांतों, उनकी विचारधारा और उस भारत-निर्माण की दिशा में कार्य करें जिसकी कल्पना उन्होंने की थी।

नेताजी सुभाष चंद्र बोस की भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भूमिका पर बहुत चर्चा हुई है और आज उनके तथा भारतीय राष्ट्रीय सेना (आईएनए) की भूमिका पर भारतीय और विदेशी विद्वानों द्वारा लिखी गई कई उत्कृष्ट पुस्तकें उपलब्ध हैं। हर वर्ष अनेक नए अध्ययन भी प्रकाशित हो रहे हैं। यह निश्चय ही एक स्वागतयोग्य प्रवृत्ति है।

लेकिन जिस बात को मैं आज रेखांकित करना चाहता हूँ, वह यह कि नेताजी पर उपलब्ध अधिकतर अध्ययन उनके स्वतंत्रता आंदोलन के योगदान पर तो केंद्रित हैं, परन्तु उन्होंने स्वतंत्र भारत के बारे में जो दृष्टि और विचार प्रस्तुत किए थे, उन पर पर्याप्त ध्यान नहीं देते।

हमारे स्वतंत्रता सेनानियों में से बहुत कम लोगों ने यह सोचा था कि आज़ादी के बाद

चंद्र कुमार बोस

भारत को किस प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था, कैसा आर्थिक ढाँचा और कैसी सामाजिक संरचना विकसित करनी चाहिए। परन्तु नेताजी ने 1938 में कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में हरिपुरा अधिवेशन में अपने प्रसिद्ध भाषण में भविष्य के भारत के लिए एक सुगठित खाका प्रस्तुत किया था।

हरिपुरा कांग्रेस के उस सत्र में अध्यक्ष के रूप में सुभाष चंद्र बोस ने भारतीय जनता के मौलिक अधिकारों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया—वे अधिकार जिन्हें हर भारतीय नागरिक को स्वतंत्र भारत में प्राप्त होना चाहिए। मैं यहाँ उनमें से कुछ का उल्लेख करना चाहूँगा—

- प्रत्येक नागरिक को स्वतंत्र विचार व्यक्त करने, स्वतंत्र संगठनों के निर्माण और धारण की स्वतंत्रता, तथा बिना हथियारों के शांतिपूर्ण सभा करने का अधिकार होगा—बशर्ते वह सभा कानून और नैतिकता के विरुद्ध न हो।
- प्रत्येक नागरिक को अंत:करण की स्वतंत्रता तथा अपनी पसन्द के धर्म को मानने और उसका पालन करने का अधिकार होगा—बशर्ते वह सार्वजनिक शांति और नैतिकता के विपरीत न हो।
- अल्पसंख्यकों तथा विभिन्न भाषाई क्षेत्रों की संस्कृति, भाषा और लिपियों की रक्षा की जाएगी।
- सभी नागरिक कानून की नज़र में समान होंगे—धर्म, जाति, आस्था या लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं होगा।

हरिपुरा में यानी आज से आठ दशकों से भी अधिक पहले नेताजी ने यह भी बताया कि

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत के पुनर्निर्माण की दिशा क्या होनी चाहिए। उन्होंने कहा: 'पुनर्निर्माण के संदर्भ में हमारी प्रमुख समस्या होगी—देश से गरीबी का उन्मूलन कैसे हो।' इतने वर्षों पहले ही नेताजी ने चेतावनी दे दी थी कि स्वतंत्रता के बाद भारत की असली समस्याएँ 'गरीबी, अशिक्षा और बीमारी' होंगी। विदेश संबंधों के महत्व तक पर नेताजी ने गंभीरता से विचार किया था।

उन्होंने कहा कि भारतीय सांस्कृतिक संगठनों और वाणिज्य मंडलों के माध्यम से अंतरराष्ट्रीय संपर्कों को विकसित किया जाना चाहिए ताकि भारत की प्रतिष्ठा विश्व भर में बढ़ सके। उन्होंने यह भी कहा कि स्वतंत्र भारत विश्व में एक सकारात्मक शक्ति के रूप में उभरेगा।

आपको यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि 1928 में, जब भारत ब्रिटिश शासन के अधीन था, तब भी सुभाष चंद्र बोस स्वतंत्र भारत के राजनीतिक ढाँचे के रूप में लोकतंत्र की कल्पना कर रहे थे। 3 मई 1928 को पुणे में महाराष्ट्र प्रांतीय सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए नेताजी ने कहा था—

'लोकतंत्र किसी भी प्रकार से पश्चिमी संस्था नहीं है; यह एक मानवीय संस्था है। जहाँ-जहाँ मनुष्य ने राजनीतिक संस्थाओं का विकास करने का प्रयास किया है, वहाँ-वहाँ लोकतंत्र की अद्भुत संस्था विकसित हुई है। भारत के प्राचीन इतिहास में लोकतांत्रिक संस्थाओं के असंख्य उदाहरण मिलते हैं।'

उन्होंने आगे कहा : 'असम के खासी जनजाति में आज भी पूरे क़बीले के मत से शासक चुना जाता है, और यह परंपरा अत्यंत प्राचीन काल से चली आ रही है। गाँवों और नगरों के प्रशासन में भी लोकतांत्रिक सिद्धांतों का पालन किया जाता था।'

आज जब विश्व के कई हिस्सों में लोकतंत्र संकट से गुजर रहा है, हमें नेताजी के लोकतंत्र में उस अटूट विश्वास को याद करना चाहिए। लोकतंत्र एक परिपूर्ण व्यवस्था नहीं है, परन्तु उपलब्ध व्यवस्थाओं में यह सर्वोत्तम अवश्य है। स्वाभाविक है कि लोकतंत्र के सुचारु संचालन के लिए कुछ पूर्वापेक्षाएँ आवश्यक हैं—

हमें एक सुरक्षित और पारदर्शी निर्वाचन प्रणाली चाहिए; एक बहुदलीय व्यवस्था चाहिए ताकि एकदलीय शासन तानाशाही में न बदल जाए; एक दक्ष विधायिका और वास्तविक रूप से स्वतंत्र न्यायपालिका चाहिए। संक्षेप में—कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका के बीच प्रभावी 'चेक्स ऐंड बैलेंसेज़' अनिवार्य हैं।

जो भी व्यक्ति स्वतंत्र भारत के संबंध में नेताजी की दृष्टि, योजनाओं और कार्यक्रमों को समझना चाहता है, उसे उनके उन भाषणों और लेखन को अवश्य पढ़ना चाहिए जो 1920 के दशक से लेकर जनवरी 1941 में उनके भारत छोड़ने तक फैले हुए हैं।

मैं यहाँ नेताजी का एक और विचार प्रस्तुत करना चाहूँगा, जो उन्होंने 1928 में कहा था-

'यदि हम भारत को वास्तव में महान बनाना चाहते हैं, तो हमें लोकतांत्रिक समाज की नींव पर राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना करनी होगी। जन्म, जाति या पंथ पर आधारित विशेषाधिकार समाप्त होने चाहिए, और सभी के लिए समान अवसर उपलब्ध होने चाहिए—चाहे उनकी जाति, पंथ या धर्म कुछ भी हो। स्त्रियों की स्थिति भी ऊँची की जानी चाहिए और उन्हें सार्वजनिक जीवन में अधिक और बुद्धिमत्तापूर्ण भूमिका निभाने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।'

इक्कीसवीं सदी में नेताजी की प्रासंगिकता कई मायनों में स्वयं स्पष्ट है। जिन समस्याओं को वे आठ-नौ दशक पहले दूर करना चाहते थे, वे आज भी हमारे सामने हैं—गरीबी, अशिक्षा और बीमारी।

यदि हम सचमुच नेताजी को श्रद्धांजलि देना चाहते हैं, तो हमें इन चुनौतियों से निपटने के लिए नए सिरे से संकल्प लेना होगा। केवल उन्हें याद कर लेना और उस भारत की उनकी परिकल्पना की उपेक्षा करना पर्याप्त नहीं है।

लेखक : चंद्र कुमार बोस नेताजी सुभाषचंद्र बोस के प्रपौत्र हैं। कोलकाता और लंदन में प्रबंधन और क़ानून की शिक्षा के बाद उन्होंने टाटा स्टील से अपने करियर की शुरुआत की और 18 वर्ष बाद मानव संसाधन व कौशल विकास की अपनी परामर्श संस्था स्थापित की। वे सामाजिक मुद्दों पर कार्य करते रहे हैं और मानवाधिकार जागरूकता के लिए इंडियन सोशलिस्ट डेमोक्रेटिक फ़ोरम से जुड़े हैं। नेताजी सुभाष फ़ाउंडेशन के साथ भी सक्रिय रहे हैं। 2012 से वे द ओपन प्लेटफ़ॉर्म फ़ॉर नेताजी के संयोजक हैं और फ़ाइलों के सार्वजनिककरण आंदोलन का नेतृत्व किया।

■■■■

नेताजी : गीता-प्रेरणा, वैचारिक जटिलताएँ व संघर्ष का ऐतिहासिक यथार्थ

30 दिसम्बर 1943 को अंडमान-निकोबार द्वीपसमूह पर पहली बार फहराए गए स्वतंत्र भारत के ध्वज की वर्षगाँठ पर राष्ट्र नेताजी सुभाष चंद्र बोस को श्रद्धांजलि अर्पित करता है। यह वह दिन था जब बोस ने ब्रिटिश शासन से छिनी हुई भारत के आज़ादी की घोषणा की थी।

गीता और आध्यात्मिक प्रेरणा : सुभाष चंद्र बोस का विश्वास था कि भगवद्गीता ब्रिटिश-विरोधी संघर्ष में उनके लिए नैतिक शक्ति और आत्मबल का प्रमुख

डॉ. शरदेन्दु प्रकाश

स्रोत रहा।

अध्यात्मिक चेतना के शक्ति पुंज : नेताजी को स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवादी सनातनी विचार, करुणा और कर्मयोग की शिक्षाएँ बचपन से ही प्रभावित करती रहीं। भारत के प्राचीन ग्रंथों की आधुनिक व्याख्याओं ने बोस की अध्यात्मिक और राजनीतिक चेतना को दिशा दी। इतिहासकार लियोनार्ड गॉर्डन के अनुसार, बोस की आंतरिक आध्यात्मिक यात्रा उनके राजनीतिक जीवन के समानांतर

चलती रही—यह उन्हें उस दौर के नास्तिक समाजवादी और कम्युनिस्ट नेताओं से बिल्कुल अलग बनाती है।

गौरतलब है कि स्वामी विवेकानंद के गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी शक्ति पुंज मां महाकाली (चामुण्डा) के उपासक थे, और स्वामी विवेकानंद जी भी उन्हीं मां चामुण्डा के ही भक्ति में लीन थे। स्वामी जी के ही भांति नेताजी सुभाष बाबू भी मां चामुण्डा (शक्ति) के परम आराधक थे, तथा प्रत्येक दिन यानी रात्रि 12:00 बजे (24:00 बजे) गहरे ध्यान में उतर जाते थे, उनके कुछ करीबी लोगों का तो यहां तक कहना है कि नेताजी जी को भी सक्षात मां चामुण्डा का दर्शन प्राप्त था और आगे के किसी भी कार्ययोजना के लिए मां चामुण्डा से अनुमति लेकर ही आगे बढ़ते थे

राजनीतिक विचारधारा की जटिलता : 1930 के दशक में बोस ने 'यूरोपीय समाजवाद' और 'फासीवादी संगठन-शैली' के बीच एक संभावित संश्लेषण का विचार रखा। जहाँ जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि कम्युनिज़्म और फासीवाद के बीच 'कोई मध्य मार्ग नहीं', वहीं बोस का मत था कि भारत जैसे विविधतापूर्ण समाज में केवल धर्म-विमुख कम्युनिज़्म स्वीकार्य नहीं हो सकता।

1944 में उन्होंने कहा था : हमारा सामाजिक-राजनीतिक दर्शन राष्ट्रीय समाजवाद और कम्युनिज़्म का एक समन्वित रूप होना चाहिए।

उनका विचार था कि स्वतंत्रता के तुरंत बाद भारत को सशक्त, केंद्रीकृत और अनुशासित शासन की आवश्यकता होगी ताकि गरीबी, सामाजिक विषमता और अव्यवस्था पर काबू पाया जा सके। इस पृष्ठभूमि में उन्होंने इटली, जर्मनी और सोवियत रूस के संगठनात्मक ढाँचे का गहन अध्ययन किया, यद्यपि उनका अंतिम लक्ष्य भारतीय राष्ट्रनिर्माण था, न कि विदेशी विचारधाराओं की नकल।

कई विद्वानों के अनुसार, बोस न तो नाजी विचारधारा के समर्थक थे और न ही फासीवादी सिद्धांतों के अनुयायी। वे महिलाओं के सशक्तिकरण, धर्मनिरपेक्षता और उदार मूल्यों के पक्षधर थे, परंतु उन्होंने युद्धकाल में उन तकनीकों और संरचनाओं का उपयोग किया जो अन्य दूसरे शासन में लोकप्रिय थीं।

यहूदी-विरोध और नैतिक प्रश्न : यह विषय बोस की विरासत का सबसे महत्वपूर्ण अध्याय है।

1938 में उन्होंने जर्मनी की नस्लवादी नीतियों की आलोचना की थी, लेकिन 1942 में जर्मन पत्र आन्ग्रिफ में उन्होंने आर्य-सम्बंधित सांस्कृतिक दावे पेश किए, स्वस्तिक को भारतीय परंपरा से जोड़ा, और यह भी लिखा कि यहूदी समुदाय ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से जुड़ा रहा है।

स्वामी विवेकानंद के गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी शक्ति पुंज मां महाकाली (चामुण्डा) के उपासक थे, और स्वामी विवेकानंद जी भी उन्हीं मां चामुण्डा के ही भक्ति में लीन थे। स्वामी जी के ही भांति नेताजी सुभाष बाबू भी मां चामुण्डा (शक्ति) के परम आराधक थे।

युद्धकालीन रणनीति और आज़ाद हिंद फ़ौज : कांग्रेस के भीतर अवमानना और मतभेदों के बाद बोस ने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्ष को अंतरराष्ट्रीय समर्थन दिलाने के लिए धुरी-शक्तियों (Asis Powers) का सहारा लिया।

1941 में वे जर्मनी पहुँचे, बाद में जापान गए, और वहाँ आज़ाद हिंद फ़ौज का नेतृत्व संभाला। आईएनए ने बर्मा और उत्तर-पूर्वी भारत में ब्रिटिश सेना के विरुद्ध सैनिक मोर्चे खोले। विजयी परिणाम न मिलने के बावजूद, आईएनए ने भारतीय जनता के भीतर स्वतंत्रता का उत्साह अभूतपूर्व स्तर पर जगाया।

उनके प्रसिद्ध नारों— तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूंगा, 'दिल्ली चलो', 'इत्तेफ़ाक, एतमाद, क़ुर्बानी'—ने देशभक्ति की चेतना को नई उँचाई दी।

नेताजी का राष्ट्रदृष्टि और आधुनिक भारत : बोस का दृष्टिकोण था कि स्वतंत्रता के बाद भारत तभी प्रगति कर सकता है जब वह गरीबी, अशिक्षा और रोगों के विरुद्ध ठोस और संगठित प्रयास करे। स्वावलंबन, राष्ट्र-सेवा और अनुशासित शासन उनकी प्राथमिकताएँ थीं। आज 'आत्मनिर्भर भारत' जैसी पहलों में उनके विचारों की झलक देखी जा सकती है—हालाँकि उनका ऐतिहासिक संदर्भ भिन्न था।

स्थायी विरासत : 23 जनवरी 1897 को कटक में कुलीन बंगाली कायस्थ जानकीनाथ बोस के घर जन्मे सुभाष चंद्र बोस ने भारतीय सिविल सेवा जैसे सम्मानित पदों को छोड़कर कांटों भरे रास्तों का चयन करते हुए सार्वजनिक जीवन और स्वतंत्रता संग्राम को अपनाअपनाया।

उनकी मृत्यु (18 अगस्त 1945, ताइवान विमान दुर्घटना) आज भी रहस्य और चर्चा का विषय है।इसी रहस्य की परतें खोलते हुए नेताजी सुभाष संगठन संकल्पित है कि जापान के रेंकोजी मंदिर में सुरक्षित उनकी अस्थियां जल्द से जल्द भारत लाकर त्रिवेणी संगम में प्रवाहित किया जाए ताकि उनकी आत्मा को मुक्ति और चिर शान्ति मिले ।

उनकी जीवनगाथा आज भी प्रेरणा, वैचारिक साहस, रणनीतिक प्रयोग, नैतिक जटिलताओं और अदम्य देशभक्ति का सम्मिश्रण का उत्कृष्ट उदाहरण है। उनका दिया जय-हिंद का नारा आज 'राष्ट्रीय अभिवादन' बन चुका है।

लेखक डॉ. शरदेन्दु प्रकाश 'सज्जन जी'
संस्थापक सचिव : मानव सेवा मिशन
इंटरनेशनल स्प्रिचुअल ट्रस्ट, झूँसी, प्रयागराज, विगत 35 वर्षों से 'रामायण द्वारा रोग निवारण' (श्री राम चरित मानस के सिद्धान्तों एवं उनके वैज्ञानिक प्रयोग पर आधारित)

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का क्रांतिकारी वैचारिक आयाम : सुभाष चन्द्र बोस

डॉ. सत्या सिंह

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन अनेक विचारधाराओं, प्रवाहों और नेतृत्व-शैलियों का संगम था, मध्यमार्गी उदारवाद से लेकर क्रांतिकारी राष्ट्रवाद तक। इसी धारा में सुभाष चन्द्र बोस (1897-1945) वह नाम है जिन्होंने भारतीय स्वाधीनता-संघर्ष को सैन्य शक्ति, अंतरराष्ट्रीय कूटनीति और चरम राष्ट्रीय स्वाभिमान के अप्रत्याशित मोड़ पर पहुँचा दिया था। उनका व्यक्तित्व महात्मा गांधी की अहिंसा-नीति से वैचारिक मतभेद रखने के बावजूद, भारतीय स्वतंत्रता के लक्ष्य बहुत ही दृढ़ और अदम्य था। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस का जीवन इस बात का प्रमाण है कि कोई राष्ट्र केवल नैतिक आग्रहों से ही नहीं, बल्कि संगठित शक्ति, आत्मबल और साहसिक रणनीति से भी स्वतंत्रता प्राप्त कर सकता है।

प्रारम्भिक जीवन, शिक्षा और राष्ट्रवादी चेतना का उदय : सुभाष चन्द्र बोस का जन्म 23 जनवरी 1897 को कटक (उड़ीसा) में हुआ। प्रारंभ से ही वे तेजस्वी बुद्धि, अनुशासनप्रियता और आध्यात्मिक गंभीरता के लिए प्रसिद्ध थे। कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कॉलेज में अध्ययन के दौरान प्रोफेसर ओटेन (प्रोफेसर ओटेन एक ऐसे ब्रिटिश प्रोफेसर थे जो कोलकाता के प्रेसीडेंसी कॉलेज में पढ़ाते थे और जिन्हें सुभाष चंद्र बोस ने उनके नस्लीय विरोधी और अपमानजनक बयानों के कारण मारा था, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें कॉलेज से निकाल दिया गया था। प्रोफेसर ओटेन का पूरा नाम ई.एफ. ओटेन था।) के एक नस्लवादी वक्तव्य पर विरोध के कारण उनका निष्कासन हुआ जिसके कारण उनके भीतर प्रतिरोध और न्याय की चेतना को दृढ़ किया। बोस ने कलकत्ता (अब कोलकाता) के प्रेसीडेंसी कॉलेज से दर्शनशास्त्र में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। 16 वर्ष की आयु में ही स्वामी विवेकानंद और रामकृष्ण की शिक्षाओं से प्रेरित होकर, सुभाष चंद्र बोस में देशभक्ति की गहरी भावना विकसित हो गई थी।

नेता जी सुभाष चन्द्र बोस आईसीएस (इंपीरियल सिविल सर्विस) अधिकारी (जिसे अब आईएएस के नाम से जाना जाता है) बने। 1920 में, बोस ने आईसीएस रैंकिंग में चौथा स्थान प्राप्त किया था। उस समय, ICS परीक्षा इंग्लैंड में आयोजित की जाती थी, और बोस ने परीक्षा की तैयारी के लिए इंग्लैंड की यात्रा की थी। वे आईसीएस में उच्च रैंक से उत्तीर्ण हुए, किंतु उन्होंने ब्रिटिश प्रशासन की नौकरी को 'गुलामी का औजार' कहकर त्याग दिया था, यह वह क्षण था जिसने उन्हें राष्ट्रवादी नेतृत्व की मुख्यधारा में धकेल दिया। चित्तरंजन दास उनके राजनीतिक गुरु बने, और बोस ने बंगाल की राजनीतिक धारा को उग्र राष्ट्रीयता की ओर उन्मुख किया।

कांग्रेस राजनीति में सुभाष चन्द्र बोस की भूमिका : सुभाष चन्द्र बोस और महात्मा गांधी के संबंध भारतीय राजनीति की सबसे जटिल व्याख्याओं में से एक हैं। बोस गांधी को 'राष्ट्रपिता' मानते थे, किंतु वे उनके तरीकों, विशेषकर अहिंसा और चरणबद्ध सुधारवादी आंदोलनों से संतुष्ट नहीं थे। बोस का विश्वास था कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद को केवल अहिंसात्मक नैतिक आग्रहों से नहीं झुकाया जा सकता बल्कि इसके लिए शक्तिशाली अंतरराष्ट्रीय सहयोग और सैन्य प्रतिरोध आवश्यक है। 1938 में हरिपुरा अधिवेशन में बोस अध्यक्ष चुने गए। उनकी अध्यक्षीय रिपोर्ट एक दूरदर्शी राष्ट्रीय योजना थी जिसमें औद्योगीकरण, केंद्रीय योजना आयोग और सैन्य क्षमता-वृद्धि पर बल दिया गया था। यह दृष्टिकोण नेहरू की समाजवादी दृष्टि के बहुत निकट था। 1939 में त्रिपुरा अधिवेशन में बोस पुन: निर्वाचित हुए, किन्तु गांधी-समर्थित नेतृत्व ने कार्य समिति में उनके सहयोग से इंकार कर दिया। अंतत: सुभाष ने 'फॉरवर्ड ब्लॉक' की स्थापना की क्योंकि यह संगठन कांग्रेस के भीतर एक उग्र राष्ट्रवादी धारा का प्रतिनिधित्व करता था।

द्वितीय विश्वयुद्ध और अंतरराष्ट्रीय कूटनीति : द्वितीय विश्वयुद्ध के आरम्भ होते ही नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने स्वाधीनता के लिए वैश्विक परिस्थितियों को अवसर के रूप में पहचाना। उन्होंने भारत से निकलने के लिए साहसिक 'काबुल-मॉस्को-बर्लिन' मार्ग अपनाया। जर्मनी में उन्होंने हिटलर से मुलाकात की, यद्यपि नाज़ी विचारधारा से उनका कोई सामंजस्य नहीं था, पर उन्होंने इसकी सैन्य क्षमता को ब्रिटिश साम्राज्य से लड़ने के रणनीतिक साधन के रूप में देखा। जर्मनी में ही उन्होंने 'Free India Centre' (यह आज़ाद हिंद आंदोलन की एक अनंतिम शाखा थी जिसका मुख्यालय बर्लिन में था और इसके अध्यक्ष ए.सी.एन. नांबियार थे। इसकी मुख्य जिम्मेदारियाँ धुरी शक्तियों के साथ संबंधों का प्रबंधन करना, आज़ाद हिंद रेडियो का संचालन करना और भारतीय सेना के लिए स्वयंसेवकों की भर्ती करना थीं, इसकी स्थापना 1942 में सुभाष चंद्र बोस ने नाज़ी जर्मनी में की थी।) और 'Azad Hind Radio' (आजाद हिंद रेडियो की स्थापना 1942 में नेताजी सुभाष चंद्र बोस द्वारा की गई थी, जो ब्रिटिश विरोधी प्रचार का एक साधन था। इसका पहला प्रसारण 7 जनवरी 1942 को हुआ था, और इसका मुख्यालय शुरू में जर्मनी में था। बाद में मुख्यालय को दक्षिण-पूर्व एशिया में सिंगापुर और फिर रंगून (यांगून) में स्थानांतरित कर दिया गया।) की स्थापना की। उनके भाषणों ने भारतीय युवाओं में अद्भुत ऊर्जा भर दी थी, जो उनकी वाक्-शक्ति और संगठनात्मक प्रतिभा का प्रमाण है।

1943 में बोस पनडुब्बी द्वारा जापान पहुँचे, यह इतिहास के सबसे साहसिक सैन्य अभियानों में से एक माना जाता है। जापान पहुँचने पर नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने रासबिहारी बोस से लीग ऑफ़ इंडियन इंडिपेंडेंस का नेतृत्व सँभाला। उन्होंने INA (Indian National Army/ आज़ाद हिन्द फौज) को पुनर्गठित किया, अनुशासन और उत्साह का संचार किया, और इसे एक सुसंगठित राष्ट्रीय सेना में परिवर्तित किया, जिसे वे 'भारतीय स्वतंत्रता की सशस्त्र शक्ति' कहते थे।

आज़ाद हिन्द फौज (INA) (आजाद हिंद फौज, जिसे भारतीय राष्ट्रीय सेना (INA) भी कहा जाता है, ब्रिटिश शासन से भारत की स्वतंत्रता के लिए लड़ने वाला एक

सैन्य संगठन था। इसकी स्थापना 1942 में कैप्टन मोहन सिंह ने की थी और बाद में इसे नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने पुनर्जीवित किया। इस फौज में करीब 85,000 सैनिक शामिल थे और इसमें 'झांसी की रानी रेजिमेंट' नाम से एक महिला रेजिमेंट भी थी।) और आज़ाद हिन्द सरकार (आजाद हिंद सरकार 21 अक्टूबर 1943 को सिंगापुर में नेताजी सुभाष चंद्र बोस द्वारा स्थापित एक अनंतिम सरकार थी, जिसे नौ देशों ने मान्यता दी थी। यह सरकार द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अंग्रेजों के खिलाफ एक राजनीतिक आंदोलन था और इसके अध्यक्ष, प्रधानमंत्री और सेनाध्यक्ष के रूप में बोस ने खुद कई पद संभाले थे। इस सरकार ने अपना बैंक, मुद्रा और डाक टिकट भी जारी किया था और जापान ने इसे अंडमान और निकोबार द्वीप समूह सौंप दिए थे, जिन्हें 'शहीद द्वीप' और 'स्वराज द्वीप' नाम दिया गया था।)

'दिल्ली चलो' और सैन्य अभियान : सुभाष बोस का प्रसिद्ध नारा 'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा' भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष के सबसे उदात्त आह्वानों में से एक है। आज़ाद हिन्द फौज ने बर्मा, मणिपुर और पूर्वोत्तर भारत में ब्रिटिश सेना से भिड़ंत की। इम्फाल और कोहिमा की लड़ाइयाँ निर्णायक भले न रही हों, पर उन्होंने भारतीय सैनिकों के नैतिक बल और राष्ट्रीय चेतना को अभूतपूर्व रूप से ऊँचा उठाया।

आज़ाद हिन्द सरकार (Provisional Government of Free India) 21 अक्टूबर 1943 को बोस ने स्वतंत्र भारत की अंतरराष्ट्रीय मान्यता प्राप्त 'अंतरिम सरकार' बनाई, जिसे जापान, जर्मनी, इटली, फिलीपींस, बर्मा तथा अन्य राष्ट्रों ने मान्यता दी। अंडमान, निकोबार द्वीपों को आज़ाद हिन्द सरकार को सौंपा गया और नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने इनके नाम शहीद और स्वराज रखे। यह उस समय की राजनीतिक कल्पना से बहुत आगे की बात थी कि, एक दास राष्ट्र का नेता अंतरराष्ट्रीय मंच पर स्वतंत्र सरकार चलाए।

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस का का वैचारिक प्रतिमान : सुभाष बोस का राष्ट्रवाद सांस्कृतिक संकीर्णता पर नहीं, बल्कि मानववादी सरोकारों, आर्थिक न्याय, धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रीय एकता पर आधारित था। वे वर्गीय समानता, औद्योगिक क्रांति और वैज्ञानिक सोच के पक्षधर थे। बहुत कम नेताओं में समाजवादी आर्थिक चिंतन और सैन्य अनुशासन साथ-साथ चले हैं। बोस के विचार में भारत को केंद्रीकृत योजना, भारी उद्योग, रक्षा-प्रौद्योगिकी, और सामाजिक न्याय पर आधारित एक मजबूत राष्ट्र बनना चाहिए। नेता जी सुभाष चंद्र बोस ने भारतीय स्वतंत्रता को किसी चरणबद्ध सुधार की प्रक्रिया नहीं माना। उनके लिए पूर्ण स्वराज तत्काल व अपरिहार्य था। वे गांधीवाद के असहयोग और सत्याग्रह को नैतिक दृष्टि से श्रेष्ठ मानते हुए भी इसे स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए अपर्याप्त समझते थे। उनकी विचारधारा 'सशस्त्र संघर्ष + समाजवादी राष्ट्र-निर्माण' का अनूठा संयोजन थी, जिसने युवा पीढ़ी में संघर्ष-चेतना जगाई। यह ऐतिहासिक रूप से प्रमाणित है कि, 1945-46 1945-46 के लाल किला मुकदमे में भारतीय राष्ट्रीय सेना के सैनिकों के खिलाफ ब्रिटिश सरकार द्वारा किए गए कोर्ट-मार्शल थे, जो राजद्रोह और हत्या जैसे आरोपों पर आधारित थे। इन मुकदमों ने पूरे भारत में बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शनों को जन्म दिया, जिससे राष्ट्रवादी भावनाएँ और एकता बढ़ी। इन घटनाओं ने अंततः भारत के स्वतंत्रता संग्राम को गति दी और ब्रिटिश शासन के अंत में योगदान दिया) ने भारतीय जनता, सैनिकों और विशेषकर नौसैनिकों में विद्रोह की चिंगारी भड़काई। 1946 का रॉयल इंडियन नेवी विद्रोह इस बात का संकेत था कि ब्रिटिश शासन अब भारतीय सैनिकों पर मनोवैज्ञानिक नियंत्रण खो रहा था। ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली ने बाद में स्वीकार किया कि

'INA और बोस के प्रभाव ने ब्रिटिश सत्ता के आधार को नष्ट कर दिया।' नेता जी सुभाष चन्द्र बोस आधुनिक भारत के स्वतंत्रता-संघर्ष के उन अग्रणी नेताओं में थे जिन्होंने राष्ट्रवाद को केवल विचार नहीं, बल्कि एक संगठित, अनुशासित और सैन्य शक्ति के रूप में परिभाषित किया। उनका योगदान बहुआयामी था। राजनीतिक, रणनीतिक, कूटनीतिक और वैचारिक, जो भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को एक नई ऊर्जा और अंतरराष्ट्रीय पहचान प्रदान करता है। सुभाष चन्द्र बोस ने भारतीय स्वतंत्रता को किसी चरणबद्ध सुधार की प्रक्रिया नहीं माना। उनके लिए पूर्ण स्वराज तत्काल व अपरिहार्य था। वे गांधीवाद के असहयोग और सत्याग्रह को नैतिक दृष्टि से श्रेष्ठ मानते हुए भी इसे स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए अपर्याप्त समझते थे। उनकी विचारधारा 'सशस्त्र संघर्ष +समाजवादी राष्ट्र-निर्माण' का अनूठा संयोजन थी, जिसने युवा पीढ़ी में संघर्ष-चेतना जगाई। 'दिल्ली चलो' का उनका नारा भारतीयों में सैन्य आत्मविश्वास और स्वतंत्रता के लिए त्याग की प्रेरणा बन गया। 1943 में सुभाष चन्द्र बोस ने सिंगापुर में निर्वासन सरकार की स्थापना की, जिसे कई देशों जापान, जर्मनी, इटली, फिलीपींस, बर्मा आदि ने मान्यता दी। यह स्वतंत्र भारत की पहली अंतरराष्ट्रीय रूप से स्वीकारित सरकार थी। बोस ने मुद्रा, स्टाम्प और प्रशासनिक ढाँचा भी विकसित किया, जो भारत की स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में वैधानिक पहचान का आधार बने।

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस नें भारत की स्वतंत्रता को विश्व मंच पर एक विषय के रूप में स्थापित किया। एशिया और यूरोप की शक्तियों से उन्होंने यह तर्क रखा कि भारत की स्वतंत्रता एशिया की मुक्ति और वैश्विक शक्ति-संतुलन के लिए आवश्यक है। यह अंतरराष्ट्रीयरण गांधी-नेहरू के कूटनीतिक प्रयासों से भिन्न और अधिक आक्रामक था, जिसने ब्रिटिश साम्राज्य पर दबाव बढ़ाया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भीतर एक अधिक उग्रवादी दृष्टिकोण की वकालत करने के लिए उन्होंने फॉरवर्ड ब्लॉक नामक एक नए राजनीतिक दल की स्थापना भी की थी। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस आधुनिक भारत में महिलाओं की सैन्य भागीदारी के अग्रदूत थे। उन्होंने कैप्टन लक्ष्मी सहगल के नेतृत्व में 'रानी झाँसी रेजिमेंट' बनाई विश्व इतिहास की पहली पूर्ण महिला युद्ध-रेजिमेंटों में से एक। यह भारतीय समाज में नारी-सशक्तिकरण की निर्णायक मिसाल बनी।

आज़ाद हिन्द फौज की सैन्य कार्रवाइयों और बोस के मृत्यु-रहस्य ने उपमहाद्वीप में जबरदस्त मनोवैज्ञानिक प्रभाव छोड़ा। 1945-46 के आज़ाद हिन्द फौज ट्रायल और नौसेना विद्रोह (1946) में सैनिकों के असंतोष ने ब्रिटिश प्रशासन को स्पष्ट संकेत दे दिया कि भारतीय सैनिक अब उनके प्रति निष्ठावान नहीं रहे। इतिहासकार यह मानते हैं कि यह दबाव ब्रिटेन के तेजी से भारत छोड़ने के निर्णय में निर्णायक बना था। उन्होंने 'द इंडियन स्ट्रगल' नामक पुस्तक लिखी, जिसमें 1920 से 1942 तक के भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का वर्णन है।

(लेखक पूर्व पुलिस अधिकारी, अधिवक्ता, साहित्यकार, कॉउंसलर, मोटिवेशनल स्पीकर, सोशल एक्टिविस्ट है)

नेताजी सुभाष चंद्र बोस - एक यथार्थ

नेताजी सुभाष चंद्र बोस का जीवन रंगीन और लगभग नाटकीय घटनाओं से भरा था, जो उनके अनुशासन, साहस और मिशन के साथ वादा करने, प्रदर्शन करने और परिणाम देने की दृढ़ता को दर्शाता था। नीचे उनके जीवन के कुछ अनकहे अंश दिए गए हैं—

बाल्यकाल के आदर्श : कलकत्ता, ओडिशा में एक स्कूली छात्र के रूप में, बोस एक बार एक माली को बचाने के लिए दौड़ पड़े जिसे कुछ ब्रिटिश विद्यार्थियों द्वारा अपमानित किया जा रहा था–यह उनके अन्याय और नस्लवाद के प्रति असहिष्णुता का शुरुआती संकेत था।

वे बचपन से ही अत्यंत आध्यात्मिक थे, स्वामी विवेकानंद और रामकृष्ण परमहंस के बारे में पढ़ते और सीखते रहते थे, जिसने बाद में उनके कठोर जीवन शैली और राष्ट्र व समस्त मानवता के लिए बलिदान देने की तत्परता को आकार दिया।

आई.सी.एस. से त्यागपत्र : बोस ने 1920 में इंग्लैंड में भारतीय सिविल सेवा (ICS) परीक्षा में सर्वोच्च रैंक हासिल की, जिसे ब्रिटिश शासन के अंतर्गत भारतीयों के लिए सपनों की नौकरी माना जाता था। उन्होंने ICS से मुँह मोड़ लिया और स्वतंत्रता संग्राम के लिए काम करने हेतु इस पद को छोड़ दिया।

योग्यता प्राप्त करने के बाद, उन्होंने स्वेच्छा से सेवा से इस्तीफ़ा दे दिया और अपने भाई को लिखा कि वे उस सरकार की सेवा नहीं कर सकते जिसे वे उखाड़ फेंकना चाहते थे- यह निर्णय जिसने उनके परिवार और देशवासियों को स्तब्ध कर दिया।

गांधी और कांग्रेस से मतभेद : बोस भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में उभरते हुए नेता थे–वे महासचिव बने व 1938 में इसके अध्यक्ष भी बने। विचारधारा के स्तर पर वे गांधीजी से अहिंसा और आर्थिक नीतियों पर असहमत थे।

1939 में उन्होंने गांधी समर्थित उम्मीदवार के विरुद्ध कांग्रेस अध्यक्ष का पुन: चुनाव जीता, और गांधीजी के साथ बढ़ते मतभेदों को देखते हुए उन्होंने अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दिया तथा 'फॉरवर्ड ब्लॉक' नामक संगठन का गठन किया, ताकि स्वतंत्रता संघर्ष के व्यापक उद्देश्य के लिए काम कर सकें।

ई. जयशंकर द्विवेदी

गृह नज़रबंदी से साहसिक पलायन : 1941 की शुरुआत में बोस अपने कोलकाता स्थित घर में ब्रिटिशों की कड़ी निगरानी में नजरबंद थे। गंभीर रूप से बीमार होने का नाटक करते हुए और अलग-थलग रहते हुए, एक रात वे चतुराई से गायब हो गए, बिस्तर पर बीमार भाई को अपने स्थान पर लिटाया और बाद में उन्होंने दाढ़ी लगाकर और झूठे नाम से एक पठान का रूप धारण किया। वे कार से ब्रिटिश नियंत्रित क्षेत्रों से होते हुए पेशावर पहुँचे और वहाँ से अफ़ग़ानिस्तान तथा सोवियत संघ के रास्ते गुप्त यात्रा पर निकलकर हिटलर से मिलने जर्मनी पहुँचे।

आई.एन.ए. और आज़ाद हिन्द सरकार का गठन : जर्मनी से वे दक्षिण-पूर्व एशिया पहुँचे और 1943 में सिंगापुर पहुँचे, जहाँ उन्होंने 'भारतीय राष्ट्रीय सेना' (INA) की कमान संभाली, जिसे भारतीय युद्धबंदियों और कुछ प्रवासियों से बनाया गया था। उन्होंने सिंगापुर में 'आज़ाद हिन्द' या स्वतंत्र भारत की एक 'अस्थायी सरकार' स्थापित की, जिसे ग्यारह देशों ने कूटनीतिक रूप से मान्यता भी दी। इसके साथ ही उन्होंने लगभग 45,000 सैनिकों के साथ प्रसिद्ध 'दिल्ली चलो' अभियान की शुरुआत की।

महिला रेजिमेंट और समावेशी दृष्टि : बोस ने INA में 'रानी झाँसी रेजिमेंट' का गठन किया- एक पूर्णत: महिला युद्धक इकाई, जो स्वतंत्रता संग्राम में अभूतपूर्व थी। यह उनके विश्वास का प्रतीक था कि महिलाएँ भी आज़ादी की लड़ाई में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ सकती हैं। उन्होंने INA में धर्म और क्षेत्रीय विभाजनों को मिटाने का पूरा प्रयास किया, और सभी स्वयंसेवकों- हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई तथा विभिन्न क्षेत्रों के भारतीयों से एकजुट स्वतंत्र भारत के प्रति निष्ठा की शपथ दिलाई।

अंतिम दिन और रहस्य : 1945 में, जब द्वितीय विश्व युद्ध में जापान पराजित हो रहा था, बोस ने संघर्ष जारी रखने हेतु जापान नियंत्रित या सोवियत इलाकों की ओर जाने की कोशिश की, लेकिन रिपोर्ट के अनुसार उनका विमान 18 अगस्त को ताइपे के पास दुर्घटनाग्रस्त हो गया, जिससे जलने व गंभीर चोटों के कारण उनकी मृत्यु हो गई (रिपोर्ट्स के अनुसार)। उनकी मृत्यु और विमान दुर्घटना की परिस्थितियाँ दशकों से जांच का विषय रहा है और उनके अंतिम विदा के बारे में रहस्य बना हुआ है।

ब्रिटिशों से डर हटाना : बोस का सबसे बड़ा योगदान यह था कि उन्होंने भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के लिए जनता को जागृत किया और देश को ब्रिटिश साम्राज्य के भय से मुक्त कराया। उनका सामूहिक नेतृत्व और 'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा' का आह्वान चमत्कारिक रूप से कारगर सिद्ध हुआ।

(लेखक जयशंकर द्विवेदी वरिष्ठ अभियंता एवं समाजसेवी हैं)

क्रान्तिवीर 'नेता सुभाष चन्द्र बोस जी' को शत्-शत् नमन! : उदयभान पाण्डेय 'भान'

नेता जी की त्याग-तपस्या, साहस के गुण गायें हम।
अमर शहीदों की बेदी पर श्रद्धासुमन चढ़ायें हम।
अमित-अनीता का आन्दोलन, मिलकर सफल बनायें हम।
अस्थिकलश भारत लायेंगे आज क़सम ये खायें हम।।
अमर शहीदों को उनका स्थान दिलाना बाक़ी है।
अस्थिकलश कर रहा प्रतीक्षा, अभी तराना बाक़ी है।

नेता जी का अस्थिकलश, जापान से लाना बाक़ी है।
संस्कार करके गंगा में फूल बहाना बाक़ी है।।
अभी अधूरी है आज़ादी, कैसे पर्व मनायें हम।
फिर क्यों मोदी अस्थिकलश, लाने में देरी करते हैं।
अब उनके परिजन भी मोदी से ही आशा करते हैं।।
दृढ़प्रतिज्ञ मोदी जी को, हरदम ये याद दिलायें हम।

अस्थिकलश भारत लायेंगे आज क़सम ये खायें हम।।
अस्थिकलश भारत लायेंगे आज क़सम ये खायें हम।।
मातृभूमि पर मर-मिटने वालों का क़र्ज़ चुकायें हम।
विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, दुनियाँ में लहरायें हम।।
'भान', भारती के चरणों में झुक कर शीश नवायें हम।
अस्थिकलश भारत लायेंगे आज क़सम ये खायें हम।।

नेताजी के अवशेषों को भारत की धरती पर विश्राम मिलना चाहिए

सुमेरु रॉय चौधुरी

मौजूदा भारत सरकार द्वारा कुल 304 फाइलें सार्वजनिक की गईं और 2 मार्च 2016 को सरकार ने संसद को सूचित किया कि सभी नेताजी से संबंधित फाइलों का अवर्गीकरण (Declassification) किया जा चुका है। नेताजी के जन्मदिन पर प्रधानमंत्री ने ट्वीट करके बताया— 'नेताजी सुभाष बाबू से संबंधित सभी फाइलें अब उपलब्ध हैं... हमारी सरकार को यह कार्य पूरा करने का अवसर मिला—दशकों से लंबित मांग को पूरा किया गया। 'इसके बाद कई बार—2016, 2020, 2021, 2022—उन्होंने इस उपलब्धि का उल्लेख सार्वजनिक कार्यक्रमों में किया। इन 304 फाइलों सहित कुल 2,324 नेताजी से संबंधित फाइलें राष्ट्रीय अभिलेखागार में उपलब्ध हैं।

1997 में 990 रक्षा मंत्रालय की फाइलें, और 2012 में 1,030 गृह मंत्रालय की फाइलें अवर्गीकृत हुई थीं। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण था 2016 का अवर्गीकरण, जिसमें क्ष्ल्ह, विदेश मंत्रालय और कैबिनेट सचिवालय की फाइलें पहली बार सार्वजनिक हुईं। आज़ाद हिंद सरकार की स्मृतियों का सम्मान- 21 अक्टूबर 2018 को—आज़ाद हिंद सरकार की स्थापना के 75 वर्ष पूरे होने पर—तत्कालीन प्रधानमंत्री ने लाल किले पर तिरंगा फहराया। यह भारत के इतिहास में पहली बार हुआ था कि 15 अगस्त के अलावा किसी अन्य दिन लाल किले पर राष्ट्र ध्वज फहराया गया।इस अवसर पर लाल किले में नेताजी और INA (इंडियन नेशनल आर्मी) संग्रहालय का भी शुभारम्भ किया गया

भारतीय भूमि पर तिरंगे के 75 वर्ष : 30 दिसंबर 2018 को, अंडमान-निकोबार द्वीपसमूह में नेताजी द्वारा पहली बार भारतीय भूमि पर तिरंगा फहराए जाने की 75वीं वर्षगांठ पर, तत्कालीन प्रधानमंत्री ने मरीना पार्क में नेताजी की प्रतिमा पर पुष्पांजलि दी,पोर्ट ब्लेयर में तिरंगा फहराया,हैवलॉक, नील और रॉस द्वीपों के नाम क्रमश: बदलकर स्वराज द्वीप, शहीद द्वीप और नेताजी सुभाष चंद्र बोस द्वीप किए रुपया 75 का स्मारक सिक्का, डाक टिकट और फर्स्ट-डे कवर जारी किया।

नेताजी की 125वीं जयंती समारोह : भारत सरकार ने एक उच्च स्तरीय समिति बनाई, जिसमें पूर्व और वर्तमान प्रधानमंत्री, केंद्रीय और राज्य मंत्री, गवर्नर, मुख्यमंत्री, सांसद, द्ध स्वतंत्रता सेनानी, नेताजी की बेटी-परिजन, लेखक, इतिहासकार, खेल एवं फिल्म जगत की हस्तियाँ शामिल थीं।

पराक्रम दिवस : 2021 में भारत सरकार ने घोषणा की कि हर वर्ष 23 जनवरी को 'पराक्रम दिवस' के रूप में मनाया जाएगा। 2022 में भारत सरकार ने घोषणा की कि उस वर्ष से गणतंत्र दिवस समारोह 23 जनवरी से शुरू होगा, ताकि नेताजी की जयंती भी उसका हिस्सा बने। इसके साथ ही 'सुभाष चंद्र बोस आपदा प्रबंधन पुरस्कार' भी आरंभ किया गया।

इंडिया गेट के पास नेताजी की प्रतिमा : 8 सितंबर 2022 को भारत सरकार ने इंडिया गेट के पूर्वी हिस्से में 28 फीट ऊँची काले ग्रेनाइट की प्रतिमा राष्ट्र को समर्पित की।

अब अगला स्वाभाविक कदम : नेता जी के समर्थकों और देशवासियों को विश्वास है कि जापान से नेताजी के अवशेषों को भारत लाने का कार्य सरकार अवश्य पूरा करेगी द्ध

भारत सरकार पहले ही 30 मई 2017 के एक RTI जवाब में स्पष्ट कर चुकी है- नेताजी 18 अगस्त 1945 को ताइहोकू (ताइपेई) में विमान दुर्घटना में मारे गए, गुमनामी बाबा / भगवानजी नेताजी नहीं थे।

नेताजी की मृत्यु से जुड़ी साजिश सिद्धांत : द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त होने के तीन दिन बाद, 18 अगस्त 1945 को सैगॉन से उड़ान भरने वाला विमान ताइहोकू में दुर्घटनाग्रस्त हुआ, जिसमें नेताजी,11 जापानी सैनिक और उनके सहायक लेफ्टिनेंट कर्नल हबीबुर रहमानसवार थे। छह लोग, जिनमें नेताजी भी शामिल थे, मौके पर ही मारे गए। जापान के आत्मसमर्पण के कारण टोक्यो से संपर्क टूट चुका था। ताइवान के सैन्य प्रमुख ने विदेशी नेता की मृत्यु की घोषणा करने में असमर्थ होकर नेताजी के शरीर को टोक्यो भेजने की कोशिश की, जो विफल रही। किसी INA इकाई के अभाव में, उन्होंने एक काल्पनिक नाम देकर 23 अगस्त को अंतिम संस्कार कराया।उसी दिन जापान ने नेताजी की मृत्यु की पुष्टि की ।

अफवाहें और गलत धारणाएँ : शरीर न मिलने और मृत्यु प्रमाण पत्र न होने से भारत में अफवाहें फैल गईं।किसी ने कहा वे दक्षिण-पूर्व एशिया में हैं, किसी ने कहा सोवियत संघ में, किसी ने कहा संन्यासी बनकर लौटे- जैसे: शोउलमारी साधु, फैज़ाबाद के गुमनामी बाबा कुल 9 साधुओं को कभी न कभी नेताजी बताया गया। सभी अफवाहें समय के साथ समाप्त हो गईं।

जांच समितियाँ : विदेशी जांच (1945-46)-ब्रिटिश और सहयोगी सेनाओं ने 6 अंतरराष्ट्रीय जांचें कीं। सभी ने निष्कर्ष दिया- नेताजी की मृत्यु 18 अगस्त को विमान दुर्घटना हुई। शाहनवाज समिति (1956) 67 गवाहियाँ, 11 प्रत्यक्षदर्शी? निष्कर्ष-नेताजी का अंतिम संस्कार हुआ, उनके अवशेष रेंकोजी मंदिर में हैं।

अन्य जांचें- 1946 : पत्रकार हरीन शाह, 1954 : इंडियन इंडिपेंडेंस लीग, 2016 : यूपी सहाय आयोग सभी ने विमान दुर्घटना को सही माना। कुल 10 जांचों ने 1945 की दुर्घटना को सत्य माना नेताजी के अवशेष भारत लाने की आवश्यकता तीन पीढ़ियों से रेंकोजी मंदिर के भिक्षु नेताजी के अवशेषों की श्रद्धापूर्वक देखभाल कर रहे हैं। भारत सरकार वर्षों से इस संरक्षण में सहायता करती रही है। अब समय आ गया है कि भारत:अपने महानतम स्वतंत्रता सेनानी को,उनकी अपनी मातृभूमि में,राष्ट्रीय सम्मान के साथ अंतिम विश्राम दे। नेताजी का सपना था—एक स्वतंत्र भारत में लौटना। भाग्य ने उन्हें यह अवसर नहीं दिया। उनके अवशेषों को रेंकोजी मंदिर से लाल किले लाया जाना—उनकी 'दिल्ली चलो' यात्रा को प्रतीकात्मक रूप से पूर्ण करेगा।

(लेखक नेताजी के प्रति समर्पित एक उत्साही शोधकर्ता हैं उन्होंने नेताजी के प्रति पाँच पुस्तकें लिखी हैं व मुख्य वास्तुकार रहे हैं)

दो राहें, एक लक्ष्य : आज़ादी की निर्णायक बहस

06 दिसम्बर डॉ. भीमराव अम्बेडकर की पुण्यतिथि विशेष

भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में यदि दो ऐसे व्यक्तित्वों को खोजा जाए जो अपने-अपने क्षेत्र में तेजस्वी, निर्णायक और वैचारिक रूप से अद्भुत हों-तो वे हैं डॉ. भीमराव अंबेडकर और नेताजी सुभाषचंद्र बोस। दोनों समकालीन, दोनों लोकप्रिय, और दोनों ही अपने समय में लाखों लोगों के लिए प्रेरणा। मगर रास्ते अलग-एक ने समाज को भीतर से बदला, दूसरा देश को बाहर से आज़ाद कराने के लिए हथियारों की राह पर चला। इन्हीं दो महापुरुषों की एकमात्र मुलाकात 22 जुलाई 1940 को मुंबई में हुई-और यह मुलाकात भारत के भविष्य पर एक गहरी छाया छोड़ गई।

दो महापुरुष–दो दृष्टियाँ :

- अंबेडकर सामाजिक न्याय, संवैधानिक अधिकारों और जाति-विहीन भारत के सबसे प्रखर विचारक थे।
- बोस ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध सैन्य प्रतिरोध और पूर्ण स्वतंत्रता के सबसे निर्भीक योद्धा। दोनों स्वतंत्रता चाहते थे, पर स्वतंत्रता की परिभाषा दोनों के यहाँ अलग थी।

इकलौती मुलाकात : विचारों की टक्कर और सम्मान का संगम, 1940 की वह दोपहर भारतीय राजनीति की सबसे महत्वपूर्ण मुलाकातों में गिनी जाती है। बातें हुईं-भारत के फेडरेशन पर, राजनीतिक प्रतिनिधित्व पर, और खासकर अनुसूचित जातियों की स्थिति पर। अंबेडकर ने बोस से एक सीधा सवाल किया- 'दलितों के अधिकारों और सुरक्षा की आपकी क्या सोच है?'

नेताजी ने उत्तर दिया : 'राष्ट्रीय आंदोलन में जाति कोई मुद्दा नहीं है। यह व्यवस्था अब तेजी से लोप हो रही है।' यहीं से दोनों की दृष्टि के बीच की खाई साफ़ दिखी। अंबेडकर के लिए जाति सबसे बड़ा सामाजिक रोग थी-जड़ तक फैला हुआ, गहरे घाव की तरह। बोस के लिए जाति एक राजनीतिक बाधा नहीं थी—और वे इसे समाज में कमजोर पड़ती संस्था के रूप में देखते थे। अंबेडकर इस जवाब से संतुष्ट नहीं हुए। उनके लिए यह सिर्फ वैचारिक मतभेद नहीं था—यह समाज के सबसे पीड़ित वर्ग केभविष्य से जुड़ा सवाल था।

जगदीश गौतम

नेताजी का विचार : 'जाति अब समस्या नहीं रही।' टोक्यो विश्वविद्यालय में अपने विचार रखते हुए नेताजी ने कहा—

- 'भारत में जाति अब वैसी समस्या नहीं है जैसी प्राचीन काल में थी। कोई भी व्यक्ति कोई भी पेशा अपना सकता है।
- अंतरजातीय विवाह बढ़ रहे हैं और राष्ट्रीय आंदोलन में हम किसी की जाति नहीं पूछते।' नेताजी का यह दृष्टिकोण उस समय के शहरी, राष्ट्रवादी भारत का प्रतिबिंब था, जहाँ आंदोलन की ऊर्जा जाति-बोध को पीछे धकेल देती थी। परंतु यह दृष्टिकोण ग्रामीण भारत की वास्तविकता से बहुत दूर था-और अंबेडकर इसे भलीभांति समझते थे।

! ! भारत को आजादी सुभाषचंद्र बोस के आजाद हिंद फौज के उपजे व्यापक असर के वज़ह से मिली !!
डॉ. भीमराव अम्बेडकर

अंबेडकर का सवाल : 'जाति खत्म नहीं, समाज खत्म है।' अंबेडकर के लिए जाति:

- सामाजिक अन्याय की जड़, लोकतंत्र की सबसे बड़ी बाधा और मनुष्य की गरिमा का सबसे क्रूर शत्रु थी। वे बार-बार कहते थे—'जाति केवल एक प्रथा नहीं, एक मानसिकता है। यह समाप्त होगी तो ही देश आधुनिक और न्यायपूर्ण बनेगा।'

नेताजी का विश्वास था कि जाति अपने आप कमजोर हो रही है। अंबेडकर का विश्वास था कि जब तक सामाजिक क्रांति नहीं होगी, जाति जिंदा रहेगी। इन दोनों विचारों का टकराव ही इस मुलाकात की सबसे बड़ी ऐतिहासिक धरोहर है।

मतभेद, लेकिन सम्मान के साथ : मतभेद जितने तीखे थे, सम्मान उतना ही गहरा।

- अंबेडकर नेताजी के साहस और अंतरराष्ट्रीय रणनीति के प्रशंसक थे।
- नेताजी अंबेडकर के तर्क, विद्वता और सामाजिक दृष्टि से प्रभावित थे।

दोनों जानते थे कि एक ही लक्ष्य के लिए दो लड़ाइयाँ लड़नी होंगी-सामाजिक आज़ादी और राजनीतिक आज़ादी।

आज के भारत के लिए संदेश : जब हम 6 दिसम्बर को डॉ. भीमराव अम्बेडकर की पुण्यतिथि पर उन्हें याद करते हैं, तब यह समझना ज़रूरी है कि—

- भारत की आज़ादी केवल अंग्रेज़ों से मुक्ति नहीं थी। यह समानता, न्याय, और स्वाभिमान की भी लड़ाई थी। अंबेडकर और बोस का मतभेद यह साबित करता है कि स्वतंत्रता बहुआयामी है।
- एक तलवार से देश आज़ाद होता है, पर समाज विचारों से मुक्त होता है।

समापन- दो दिशाएँ, एक मंजिल : नेताजी बोस ने कहा- 'मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूंगा।' अंबेडकर ने कहा- 'मुझे अधिकार दो, मैं तुम्हें बराबरी दूंगा।'

दोनों की आवाज़ें आज भी भारत के भविष्य को दिशा देती हैं। राजनीतिक स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय-दोनों मिलकर ही भारत को पूर्ण राष्ट्र बनाते हैं। 6 दिसम्बर का यह दिन हमें यही याद दिलाता है-कि अंबेडकर और सुभाष, चाहे अलग राहों पर चले हों,लेकिन उनकी मंज़िल एक ही थी- एक स्वतंत्र, न्यायपूर्ण, और समान भारत। भारत की आजादी के बाद डॉ भीमराव अंबेडकर ने वर्ष 1955 में नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के बारे में बहुत स्पष्ट रूप से 'बीबीसी' के फ्रांसिस वाट्सन को दिए इंटरव्यू में कहा था 'भारत को आजादी शायद सुभाष चंद्र बोस के आजाद हिंद फौज के उपजे व्यापक असर के वजह से मिली।'

जय हिन्द !!

जापान के रेंकोजी मंदिर से नेताजी की अस्थियां भारत लाकर संगम में प्रवाहित की जाय

इतिहास की वह तारीख जो भारत भूमि के लिए सर्वाधिक राष्ट्रभक्ति से परिपूर्ण था '30 दिसम्बर 1943–वह दिन जब भारत ने पहली बार आज़ादी को महसूस करते हुए मातृभूमि को गले लगाया।

साल 1943 : समंदर की लहरें गूंज रही थीं अंडमान के तट पर...और भारत का एक महानायक गरज रहा था 'हम आजाद हैं' एक स्वप्नद्रष्टा...अपने हाथों में आज़ादी का मशाल तिरंगा उठाए, दुनिया को नया इतिहास देने जा रहा था। वह थे — नेताजी सुभाष चन्द्र बोस!' भारत की आज़ादी की कहानी केवल 15 अगस्त 1947 की नहीं है। उसकी नींव तो उस दिन पड़ी थी- 30 दिसम्बर 1943 को जब नेताजी ने पोर्ट ब्लेयर में पहली बार स्वतंत्र भारत का तिरंगा फहराया था।'

नेताजी की पहचान : 'नेताजी सुभाष चन्द्र बोस...वो नाम जो हर भारतीय के दिल में आज भी जोश भर देता है। वो जिसने कहा था–'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा!' उनके शब्द नहीं, उनके इरादे इतिहास बदल देने वाले थे।'

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि : 1943 का समय था। द्वितीय विश्व युद्ध चल रहा था। अंग्रेज़ों की नींव डगमगा रही थी। उधर सिंगापुर में नेताजी ने 'आज़ाद हिन्द सरकार' की स्थापना की–एक ऐसी सरकार जो ब्रिटिश हुकूमत को ठुकरा चुकी

अमित पांडेय

थी।' 30 दिसम्बर 1943, पोर्ट ब्लेयर और फिर आया वह दिन- 30 दिसम्बर 1943। पोर्ट ब्लेयर के आकाश में, नेताजी ने गर्व से तिरंगा फहराया- पहली बार उस भूमि पर जो अब 'आज़ाद भारत' कहलाने वाली थी। उन्होंने घोषणा की- 'यह भारत की वह भूमि है जो ब्रिटिश दासता से मुक्त हुई है।' उन्होंने द्वीपों के नाम रखे- अंडमान – 'शहीद द्वीप', निकोबार- 'स्वराज द्वीप'। 'यह घटना प्रतीक थी कि भारत की आज़ादी कोई कल्पना नहीं, बल्कि एक साकार संकल्प है। यह पहला अवसर था जब भारत की धरती पर आजाद हिन्द सरकार ने राष्ट्रध्वज फहराया।'

नेताजी का दृष्टिकोण : नेताजी कहते थे- 'Freedom is not given, it is taken' (स्वतंत्रता दी नहीं जाती, उसे छीनना पड़ता है) और इसलिए उन्होंने नारा दिया–'दिल्ली चलो!' क्योंकि उनका सपना था लालकिले पर तिरंगा फहराने का।' '30 दिसम्बर हमें याद दिलाता है कि जो सपना नेताजी ने देखा, वह 1947 में जाकर साकार हुआ। उस धधकती ज्वाला ने पूरे देश में आज़ादी की लहर जगा दी थी।' नेताजी सिखाते हैं कि देशभक्ति भाषण नहीं, बलिदान मांगती है। उनकी हर सांस, हर कदम, स्वराज की ओर एक प्रतिज्ञा थी। आज जब हम स्वतंत्र भारत में सांस ले रहे हैं, जब हर 15 अगस्त को लाल क़िले से तिरंगा फहरता है, तो याद रखिए- उस झंडे की पहली लहर 30 दिसम्बर 1943 को पोर्ट ब्लेयर में उठी थी।

नेताजी ने बताया था- 'आजादी केवल तारीख नहीं, एक ज़िम्मेदारी है।' 'जोश, जज़्बा और जुनून अगर नेताजी जैसा हो, तो इतिहास झुकता है। 30 दिसम्बर हमें याद दिलाता है कि भारत को आज़ाद करने वाले केवल शब्द नहीं, बलिदानी थे... और वह बलिदान था नेताजी का। उस समय का प्रचलित गीत था- हम दिल्ली-दिल्ली जाएंगे, हम अपना हिन्द बनायेंगे।

.....जय हिन्द!!

विशेष साक्षात्कार : नेताजी सुभाष संगठन के राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित पांडेय से मीडिया मैप के मुख्य प्रबंध संपादक से बातचीत के प्रमुख अंश...

आप कब और कैसे नेता जी सुभास चंद्र बोस के लिए काम करना आरम्भ किये ?

आप सच्चाई जानना चाहते हैं, तो मैं अवश्य आप को बताना चाहूंगा, वास्तव में बचपन में ही जिस प्रकार से हमारे पूज्य बाबा जी स्वतंत्रता संग्राम एवं अमर शहीदों के बहादुरी की किस्से सुनाया करते थे, वास्तव में उसमें नेता जी की कहानी में मुझे कुछ ज्यादा ही दिलचस्पी आने लगी थी और जहां तक मुझे याद आता है कि मैं अपने पूज्य बाबा जी से बार बार एक ही बात पूछता था कि आखिर वे इतने बहादुर थे कि इतने बड़े आततायियों से गुलामी की बेड़ियों से जकड़ी भारत माता को कैसे आज़ाद करा लिया? किंतु जिस रोमांच से भरे अंदाज में हमारे बाबा जी बाते करते थे लगता था जैसे सब कुछ दृश्य सामने घटित हो रहा हो वे आज भी हमारे मानस पटल पर अविष्मरणीय है।

चलिए ठीक है आप के बाबा जी ही आप के प्रेरणा श्रोत रहे और यह बातें जैसा आप ने बताया बचपन की हैं तो इसका वर्तमान की वास्तविकता से क्या संबंध है ?

हमारा स्पष्ट मतलब यही है कि नेता जी के प्रति अप्रतिम सम्मान हमारे मन मस्तिष्क में बचपन से ही आकार लेने लगा था, किन्तु उस बीज़ का अंकुरण या प्रस्फुटन वास्तविक रूप से तब हुआ जब हमने पूर्व प्रधान मंत्री एवं नेता विपक्ष रहे अटल विहारी बाजपेयी जी को दूरदर्शन पर सुना वर्ष 1997 में जब नेता जी सुभाष चंद्र बोस की जन्म शताब्दी मनाई जा रही थी उस समय हमने युगद्रष्टा अटल जी को दूर दर्शन पर सुना था, उन्होंने कहा था 'नेताजी का पूर्वाग्रह से रहित पुनर्मूल्यांकन होना चाहिए एवं उन्हें उनको उचित सम्मान मिलना चाहिए जिसके वे हक़दार हैं।'

इसे नियत ही कहेंगे कि अटल जी का उपरोक्त कथन हमारे जीवन का ध्येय वाक्य बन गया 6 सितंबर 1997 को दिल्ली में अटल जी से उनके आवास 6 कृष्ण मेनन मार्ग पर आशीर्वाद मिला उसके बाद कानपुर में डॉ. लक्ष्मी शहगल जी से मिलकर नेता जी की गौरव गाथा सुनी जो नेता जी के साथ रानी झाँसी रेजिमेंट की कैप्टन रही।

तभी से हमने अपना सारा जीवन नेता जी को समर्पित कर दिया इन भावनाओं के साथ कि 'मेरा तो जो भी करम है तेरी राह में है' और मुझसे अब तक जो भी बन सका अनवरत मेरा उद्देश्य सिर्फ नेता जी को सम्मान दिलाने को लेकर शन्ति पूर्ण ढंग से आंदोलन चलता रहा, प्रकृति का खेल देखिये कि अटल जी के परम् शिष्यों में से एक 'मोदी जी' ने उसके ठीक 25 वर्षों बाद 8 सितंबर 2022 को अपने अग्रज अटल जी के कथन को चरितार्थ करते हुए नेता जी को वह सम्मान दिया जिसके वे वास्तव में हक़दार थे इंडिया गेट जहाँ अन्याय के प्रतीक जार्ज पंचम की मूर्ति हुआ करती थी वहाँ पर आजादी के महानायक नेता जी को सिर्फ स्थापित ही नहीं किया बल्कि वहाँ से संसद तक जाने वाला राजपथ अब कर्तव्य पथ हो गया है। और

8 सितंबर को मोदी जी का राष्ट्र के नाम संबोधन भी अभूतपूर्व रहा इस अवसर पर उन्होंने कहा आजादी के इस अमृत महोत्सव में देश को आज नयी प्रेरणा मिली है आज हम गुजरे हुए कल को छोड़कर आने वाले कल की तस्वीर में नए रंग भर रहे है आज आधुनिक सशक्त भारत की प्राण प्रतिषठा भी कर दी है, सौभाग्य है कि आज हम यह दिन देख रहे हैं उन्होंने नेता जी को एक महामानव की संज्ञा दी और कहा पूरा विश्व उन्हें नेता मानता था, भारत वह देश नहीं जो अपने गौरवमयी इतिहास को भुला दे, जो हर भारतीय के खून में है। उसके बाद नेता जी सुभाष संगठन प्रेरित होकर 23 जनवरी 2023 को मंगल सुभाष अखंड न्याय ज्योति स्तम्भ की स्थापना करते हुए प्रधानमंत्री के आभार स्वरूप एक पुस्तिका का प्रकाशन भी किया। जो अनवरत निशुल्क वितरित भी किया जा रहा है।

तो क्या आप राजनीति में जाना चाहते है?

फिलहाल मैं किसी भी तरह के दलगत ताजनीति का हिस्सा नहीं बनाना चाहता, जो कार्य नेता जी सुभाष बाबू हमसे करा ले ,मैं उसी से अपने को सौभाग्यशाली मानता हूँ।

चर्चा में बने रहने के लिए आखिर आप नेता जी को लेकर हर समय कुछ न कुछ मुद्दा खोज लेते है?

देखिये आप लोग स्वतंत्र है कुछ भी सोच सकते है कुछ भी कह सकते है ,क्या हमारी मांग कोई राजनीती से प्रेरित है या सरकार विरोधी है या मैं राजनीती में आने के लिए ऐसा कर रहा हूँ। आज विगत 28 वर्षों से मैं सार्वजनिक जीवन में हूँ किसी राजनितिक दल में शामिल होना होता तो हो गया होता।

आखिर ये सब आप क्यों कर रहे है? क्या इसमें राजनीती नहीं है?

जी विल्कुल नहीं, इसमें कोई राजनीती नहीं है। आप को यह जान कर हैरानी होगी कि एक व्यक्ति हत्या होती है और एक व्यक्तित्व की हत्या होती है। नेता जी सुभाष बाबू का व्यक्तित्व बहुत बड़ा था आज भी सम्पूर्ण विश्व में ऐसा कोई महामानव नहीं है जिसकी वीरता एवं अंतर्राष्ट्रीय स्वीकार्यता निर्विवाद रही हो, किन्तु कुछ छुटभैया लोग झूठ फैलाकर अपनी जेबे भरने के लिए लगातार नेता जी के व्यक्तित्व की हत्या पर तुले हुए है उन्हें गुमनामी बाबा बताकर अनैतिक व्यापार में लगे हुए हुए है, मेरा कटटर विरोध उनसे है, जो नेता जी को गुमनामी बाबा की संज्ञा देते है, आप लोग पत्रकार हैं जरा सोचकर देखे कि जो ऐसे ब्रिटिश हुकूमत के साम्राज्य खुली चुनौती देते हुए उसकी चूलें हिला दी हों, क्या वह कही छुप कर बैठ सकता है। यह एक ऐसे महामानव के साथ किया जा रहा घनघोर पाप है।

जब कि पूरी दुनिया जानती और मानती है कि 18 अगस्त 1945 को नेता जी की विमान दुर्घटना में मृत्यु हो गयी, जिसे हमारी भारत सरकार भी मानती है। तो हमारी बहुत सीधी और सपाट मांग है कि जो नेता जी की अस्थियाँ जापान के रन्कोजी मंदिर में रखी है उन्हें वापस भारत लाया जाकर राजकीय सम्मान पूर्वक पवित्र संगम में प्रवाहित कर दिया जाय ताकि उनकी आत्मा को शांति मिल सके और जो उनके व्यक्तित्व की हत्या पर तुले हुए है, उन पर अपने आप लगाम लग जायेगा, इसमें कौन सी राजनीति है।

इसके लिए आप ने 30 दिसंबर को ही अपने न्याय सम्मेलन का तारीख क्यूं चुना?

क्यों कि यह वह पवित्र पावन दिवस है, जब पूरी दुनिया को यह पता चला कि नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने दुनिया का इतिहास ही नहीं नये भूगोल की संरचना भी कर दिया, जिसे उस समय विश्व के ग्यारह शक्तिशाली देशों ने मान्यता भी दे दिया किन्तु दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारे देश ने उसे भुलाने की कोशिश की। किन्तु इतिहास को दबाया जा सकता है, भुलाया नहीं जा सकता। जब से केन्द्र में प्रधानमंत्री मोदी जी आये हैं, नेताजी को लेकर अनेकों बड़े कार्य किए हैं और नेताजी को वह सम्मान दिया जो पुरी दुनिया ने देखा।

आप के हिसाब से जब मोदी जी ने नेताजी को सर्वोच्च सम्मान दे दिया है तो अब यह कैसा 'न्याय सम्मेलन'?

देखिए यह वही न्याय यात्रा है जो दशकों से चला आ रहा है किन्तु अब यह विश्वास हो गया है केन्द्र में मोदी सरकार ही उस सनातन परम्परा को समझती है, जैसा कि किसी सनातनी के मृत्यु के बाद 'अस्थि विसर्जन' की क्रिया ही अन्तिम संस्कार माना गया है। जो विगत आठ दशकों से किसी ऐसे 'योग्य पात्र' का इंतजार कर रही है, जो वास्तव में राष्ट्र धर्म और राज धर्म दोनों निभाने में परिपूर्ण हो और एकनिष्ठ धर्मावलंबी हो। उनके अन्दर वह सब कुछ विद्यमान है जो एक शासकीय व्यवस्था का अंग है।न्याय और निष्पक्षता हमारे प्रधानमंत्री जी का हर निर्णय पक्षपात रहित और न्यायपूर्ण होता है। जिस प्रकार रामचरितमानस में राजा दशरथ ने भगवान राम को समझाया था कि राजमुकुट पहनने का मतलब है कि राजा अपना सब कुछ राज्य और प्रजा को सौंप देता है। इसी लिए उनसे पूरी उम्मीद है कि यह महान न्याय पूर्ण कार्य हमारे प्रधानमंत्री ही कर सकते हैं।

30 दिसंबर 1943 की तारीख नेताजी सुभाष चंद्र बोस के लिए क्यों महत्वपूर्ण है?

क्योंकि इसी दिन नेताजी ने अंडमान-निकोबार द्वीप समूह को ब्रिटिश शासन से मुक्त घोषित किया और वहाँ तिरंगा ध्वज फहराया। अंडमान शहीद द्वीप, निकोबार स्वराज द्वीप वे आज़ाद हिंद सरकार (Provisional Government of Free India) के राष्ट्राध्यक्ष के रूप में अंडमान पहुँचे थे। भारत की धरती पर पहली बार स्वतंत्र भारत का तिरंगा ध्वज फहराया।जापान ने इन द्वीपों को अंग्रेज़ों से छीनकर आज़ाद हिंद सरकार को सौंपने का निर्णय लिया था, जिससे यह स्वतंत्र भारत की पहली अधिकृत भूमि बनी। इससे दुनिया को संदेश गया कि भारत केवल संघर्ष नहीं कर रहा, बल्कि अपनी स्वतंत्र सरकार और भू-भाग भी स्थापित कर चुका है।

30 दिसंबर 1943 की इस घटना का महत्व क्या है?

यह वह दिन था जब नेताजी ने पहली बार पूर्ण स्वराज को वास्तविक रूप में धरती पर उतारा और स्वतंत्र भारत का उद्घोष किया। जिसे प्रधानमंत्री जी ने स्वीकार करते हुए नेताजी को पहली बार अखंड भारत का प्रथम प्रधान कहा।जब सब कुछ सही है तो यह मांग भी पूरी होगी जरूर और इसे मोदी जी ही कर सकते हैं। हमारे संगठन की न्यायिक मांग रही है कि 'जापान के रेंकोजी मंदिर से नेताजी की अस्थियां भारत लाकर त्रिवेणी संगम प्रयागराज में प्रवाहित की जाय।'

आह... से उपजा होगा... आजादी का... प्रचंड उद्घोष

प्रो. प्रदीप माथुर

अक्सर समाज की सच्चाई को ही भाषा अपना हिस्सा बनाती है, आज वह वृतांत लिखते समय मेरे कलम भी कांपते हुए बोल रहे हैं..... हालांकि हमारा जन्म 1946 का है और एक साल के बाद भारत आजाद हो गया, किन्तु मैं चर्चा करना चाहूंगा कि एक गर्भस्थ शिशु के घर में जो बातें होती हैं, उसका असर गर्भावस्था के दौरान जो किसी माता के दिलों दिमाग में होता है उसका असर बच्चों के जीवन काल तक बना रहता है,यह आसानी से समझा जा सकता है कि उस समय (1945 से 1947) तक आम भारतीयों के घरों में किस प्रकार की चर्चा होती होगी, शायद उसका असर जीवन भर मेरे दिलो-दिमाग पर छाया रहा,

आज जब हम जीवन के 80वें बसन्त को पार कर चुका हूं और पिछले 5 दशकों से मीडिया पत्रकारिता क्षेत्र से जुड़ा हुआ हूं, तब यह अवसर आया कि यह अंक नेताजी सुभाष चन्द्र बोस को समर्पित करने का निर्णय मीडिया मैप परिवार ने लिया है। मैं अपने को परम् सौभाग्यशाली मानता हूं कि नेताजी के लिए भाषा के माध्यम से अपने श्रद्धासुमन अर्पित कर रहा हूं।

'काला पानी' ब्रिटिश राज का वह हथियार था, जो विद्रोह को कुचलने के लिए नर्क से भी बत्तर स्थान था जहां चारों तरफ खतरनाक जीवों ,जहरीले सांपों और कीचड़ से भरा, समुद्री तूफान था । तोपों से उड़ा देना, फांसी देना, कोड़े मारना तो बहुत आसान बात थी, लेकिन बागियों के लिए समाज से अलग-थलग करना और उनसे जबरदस्ती देह तोड़ मेहनत कराना, तड़पते हुए मरने के लिए छोड़ देना, जो मौत से भी बत्तर दर्दनाक सजा होती थी, जिसे 'सामाजिक मृत्यु' कहा जाता था।

इस जेल का निर्माण अंग्रेजो द्वारा 1896 में शुरू करके 1906 में पूरा किया गया था, जहां 698 अलग-अलग कोठारी या सेल बनाई गई थी जानवरों की भांति स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को उसमें ठूंस दिया जाता था, जिसे जापान ने 1942 में कब्जा कर लिया था।

आज जब हम 30 दिसंबर 1943 की आजादी की बात कर रहे हैं और उस स्थान की चर्चा करते हैं जहां नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने अखंड भारत के आजादी का प्रचंड उद्घोष किया था... यह सोच करके पूरे शरीर में कंपन हो जाता है पूरा दिलो दिमाग सिहर उठता है, शरीर में कंपन...आंखों में अविरल अश्रुधारा... आखिर वह भूमि ही क्यों आजादी की गवाह बनी, आगे बढ़ने से पहले यह बता देना बहुत जरूरी है काला पानी का अर्थ 'काल' से लगाया जाता है 'काल का पानी' मतलब मृत्यु का वह स्थान जिसे अंग्रेजो ने चुना था और इस स्थान पर एक ऐसे जेल का निर्माण कराया जहां भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दिवानों को यातनाएं दी जा सके और उनको गुप्त रूप से फांसी दिया जा सके और जो बच जाए उन्हें तोपों से उड़ाया जा सके इसे सेल्यूलर जेल भी कहते हैं सेल्यूलर का अर्थ यह है कि प्रत्येक कैदी के लिए अलग-अलग 'सेल' कक्ष होते थे ताकि कैदी आपस में कोई संपर्क ना कर सके,बातचीत न कर सके, चारों तरफ समुद्र से घिरा वह स्थान जहां चाह कर भी राजनीतिक बंदी भाग नहीं सकते थे इसीलिए इस स्थान को 'काला पानी' या सेल्यूलर जेल कहा गया कल्पना करिए....लाखों आजादी के दीवानों को पकड़ कर तोपों से उड़ा दिया जाता था या फांसी की सजा दे दी जाती थी या उन्हें काला पानी की सजा देकर सेलुलर जेल में डाल दिया गया था आखिर उसी धरती को सबसे पहले नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने आजाद कराया क्योंकि आह...आह... आह... से उपजा... होगा... आजादी...का... प्रचंड ...उद्घोष...जिसे नेताजी जी ने पूरा कर दिखाया। प्रत्यक्ष रूप से कहानी कुछ भी बने लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से जैसा कि अनेक भारतीय ग्रंथों में कहा गया है कि कोहेरेंश सामूहिक शक्ति या ऊर्जा जिस वातावरण में रहती है वहां सूक्ष्म शक्तियां, ऐसी ऊर्जा काम करने लगती हैं और फिर यहां पर भगवान श्री कृष्ण के द्वारा कहा गया गीता का श्लोक 'यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भव... अर्थात विशुद्ध रूप से आप कह सकते हैं जब-जब धर्म की हानि होती है तब तब भगवान किसी न किसी रूप में प्रकट होते हैं और अपना कार्य करते हैं यहां तक भी कहा गया है कि भगवान अपना कार्य किससे कराते हैं इसका निर्णय भी वही करते हैं निश्चित रूप से हमारे नेता जी के अंदर वह दैवीय-शक्ति विद्यमान थी तभी उन्होंने इतने बड़े आततायियों से लडने के लिए अंग्रेजो के कड़े पहरे के बावजूद अपने घर से अकेले निकल पड़े थे।

...जय हिंद

ममदानी की जीत का असर : शहरों में बढ़ती महंगाई पर सवाल

प्रो. शिवाजी सरकार

न्यूयॉर्क के मेयर चुनाव ने न सिर्फ अमेरिका बल्कि पूरी दुनिया का ध्यान अपनी ओर खींचा है। यह शहर केवल अमेरिका का सबसे बड़ा महानगर नहीं है, बल्कि एक ऐसा सांस्कृतिक और वित्तीय केंद्र है जिसकी नीतियाँ अक्सर वैश्विक राजनीति को प्रभावित करती हैं। यह चुनाव इस बात की परीक्षा बन गया है कि क्या अमेरिकी शहर बढ़ती असमानता, महंगाई, कॉर्पोरेट प्रभुत्व और राजनीतिक अविश्वास के दौर में आम जनता के हितों पर केंद्रित शासन की ओर मुड़ सकते हैं।

भारत में भी इसे लेकर उत्सुकता है। दिल्ली, मुंबई, चेन्नई, कोलकाता, बेंगलुरु, हैदराबाद और राज्य की राजधानियाँ जैसे लखनऊ, भुवनेश्वर या गुवाहाटी भी देख रही हैं कि क्या न्यूयॉर्क में परिवर्तन का असर वहाँ के किराए, परिवहन, स्वास्थ्य और समग्र जीवन-यापन की लागत घटाने की दिशा में कोई संकेत दे सकता है। यूरोप भी इस प्रक्रिया पर नजर रखे हुए है क्योंकि महंगाई आज वैश्विक जीवन-शैली को प्रभावित कर रही है।

इतिहास रचते ममदानी : 34 वर्षीय ज़ोहरान ममदानी की जीत ऐतिहासिक है। वह 1892 के बाद न्यूयॉर्क के सबसे युवा मेयर होंगे और साथ ही पहले मुस्लिम तथा पहले अफ्रीका-जनित मेयर। उनके पिता प्रो. महमूद ममदानी अफ्रीकी मूल के प्रसिद्ध विद्वान हैं, माँ मीरा नायर प्रसिद्ध फिल्म निर्माता हैं, और पत्नी रमा दुवाजी एक सीरियाई ईसाई कलाकार हैं जो अरब संस्कृति और महिला अधिकारों की समर्थक हैं।

यह जीत इसलिए भी उल्लेखनीय है कि ममदानी ने सीमित आर्थिक संसाधनों और कम प्रसिद्धि के बावजूद पूर्व गवर्नर एंड्रयू क्युओमो और रिपब्लिकन उम्मीदवार कर्टिस स्लिवा जैसे दिग्गजों को परास्त किया और यहाँ तक कि पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप को भी चुनौती दी।

वॉल स्ट्रीट और वित्तीय जगत उनके प्रति सशंकित हैं क्योंकि वे कॉर्पोरेट करों में वृद्धि और संपन्न वर्ग पर अधिक बोझ डालने की बात करते हैं। फिर भी कुछ विश्लेषक आशा करते हैं कि वे अपने रुख को व्यावहारिक रूप से संतुलित रखेंगे।

'जन-केन्द्रित' शासन की ओर : ममदानी अमेरिकी डेमोक्रेटिक पार्टी के प्रगतिशील और विविधतापूर्ण गुट के प्रतीक बनकर उभरे हैं। वे मुफ्त चाइल्डकेयर, बेहतर सार्वजनिक परिवहन और सरकारी क्षेत्र की सशक्त भूमिका के समर्थक हैं। इसी कारण ट्रंप ने उन्हें 'कम्युनिस्ट' कहकर न्यूयॉर्क की संघीय सहायता रोकने की धमकी दी।

न्यूयॉर्क हमेशा से अमेरिकी शहरी जीवन के दो छोरों का प्रतीक रहा है-एक ओर असीमित संपन्नता और दूसरी ओर गहरी असमानता। ममदानी को सस्ती आवास योजनाओं, जर्जर सार्वजनिक परिवहन, अपराध की धारणा, प्रवासी संकट और लगातार बढ़ती जीवन-यापन लागत जैसी समस्याओं से जूझना होगा।

वास्तविक लोकतंत्र की परीक्षा संसद में नहीं, बल्कि सड़कों पर होती है-क्या आम नागरिक किराया चुका सकता है, सुरक्षित यात्रा कर सकता है और सार्वजनिक सेवाओं का लाभ उठा सकता है?

नीतिगत बदलाव की चुनौती : अगर ममदानी प्रशासन आवास, परिवहन और उपयोगिता सेवाओं पर मूल्य नियंत्रण, सामाजिक निवेश और पारदर्शिता के उपाय लाता है, तो यह न केवल अमेरिकी बल्कि वैश्विक आर्थिक सोच को भी प्रभावित कर सकता है। इससे रिपब्लिकन और डेमोक्रेट दोनों पार्टियों को नागरिक कल्याण पर अपनी भूमिका पर पुनर्विचार करना पड़ सकता है।

हालाँकि रियल एस्टेट लॉबी, निजी ट्रांज़िट कंपनियाँ और कॉर्पोरेट हित समूह

आसानी से पीछे हटने वाले नहीं हैं। वे अदालतों से लेकर सिटी हॉल तक प्रतिरोध खड़ा करेंगे। असली सवाल यह है कि क्या ममदानी इन कॉर्पोरेट दबावों से ऊपर उठकर शासन को 'जन-प्रथम' दिशा दे पाएँगे।

कई लोग उन्हें दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल से तुलना कर रहे हैं, जिन्होंने मुफ्त बस यात्रा, शिक्षा और स्वास्थ्य में सुधार के प्रयास किए थे-परंतु नौकरशाही और राजनीतिक विरोध के चलते सीमित सफलता ही पा सके।

महंगाई और जीवन लागत पर असर : यदि न्यूयॉर्क महंगाई पर आक्रामक नियंत्रण की दिशा में ठोस कदम उठाता है-जैसे किराया, परिवहन, स्वास्थ्य खर्च और आवश्यक वस्तुओं के मूल्य पर अंकुश-तो दुनिया के अन्य शहर भी उससे प्रेरणा ले सकते हैं। इससे कंपनियों के सामने दो विकल्प होंगे: या तो वे मूल्य स्थिरता में सहयोग करें और सेवा गुणवत्ता सुधारें, या फिर राज्य और संघीय स्तर पर लॉबिंग करके सुधारों को रोकने की कोशिश करें।

मुख्य प्रश्न यह है कि क्या कंपनियाँ बदलाव का विरोध झेल पाएँगी, जब जनता की नाराज़गी लगातार बढ़ रही है? जैसा कि दिल्ली में रियल एस्टेट लॉबी ने सरकार पर दबाव बनाया, वैसे ही न्यूयॉर्क में भी टकराव की आशंका है।

ट्रंप की 'फंडिंग कटौती' की धमकी : डोनाल्ड ट्रंप कई बार कह चुके हैं कि वे 'गलत प्रबंधन' के आरोप लगाते हुए डेमोक्रेट शासित शहरों, विशेषकर न्यूयॉर्क, की संघीय सहायता घटा सकते हैं। अगर ऐसा हुआ तो शहर की वित्तीय स्थिति पर भारी दबाव पड़ेगा क्योंकि उसकी कई सामाजिक योजनाएँ और ढांचागत परियोजनाएँ संघीय अनुदान पर निर्भर हैं।

अमेरिका गहरी आर्थिक असमानता से गुजर रहा है। कंपनियों के मुनाफे बढ़े हैं पर आम कामगारों की मजदूरी ठहरी हुई है। समृद्धि की साझेदारी अब केवल इतिहास बनकर रह गई है। अब तो हालात 1930 के दशक की महामंदी से पहले की असमानता जैसे प्रतीत होते हैं।

स्वास्थ्य, आवास और स्वच्छ जल जैसी बुनियादी आवश्यकताएँ भी प्रभावित हैं। ट्रंप प्रशासन के दौरान मेडिकेड और 'अफोर्डेबल केयर एक्ट' में कटौती, आवासीय समानता नीतियों में ढील और पर्यावरण सुरक्षा के कमज़ोर पड़ने से निम्न आय और अश्वेत समुदाय सबसे अधिक प्रभावित हुए।

अगर न्यूयॉर्क की फंडिंग में कटौती होती है तो उसे या तो स्थानीय कर बढ़ाने होंगे या फिर आवश्यक सेवाओं में कटौती करनी होगी—दोनों ही राजनीतिक रूप से खतरनाक विकल्प हैं।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य- भारत और यूरोप के लिए संकेत : न्यूयॉर्क विश्व निवेश और वित्तीय नीति का मानक शहर है। उसकी नीतियाँ वैश्विक शहरी शासन और सुधार की दिशा तय करती हैं-चाहे वह आवास नियमन हो, सार्वजनिक परिवहन सुधार हो या महंगाई नियंत्रण के उपाय। भारत और यूरोप दोनों जगह अब यह बहस तेज हो रही है कि क्या 'पोस्ट-नियोलिबरल' शहरी नीति संभव है, जहाँ बाजार के बजाय नागरिक केंद्र में हों।

ममदानी की जीत इस बात की परीक्षा है कि क्या एक वैश्विक महानगर 'लाभ-प्रधान' व्यवस्था से हटकर 'जन-प्रथम' मॉडल की ओर कदम बढ़ा सकता है। अगर न्यूयॉर्क इस दिशा में सफल होता है तो इसका राजनीतिक संकेत पूरी दुनिया तक पहुँचेगा। और यदि असफल होता है, तो यह असमानता और शहरी संकट को और गहरा देगा।

न्यूयॉर्क के प्रयोग कभी स्थानीय नहीं रहते — वहाँ की नीतियों की गूँज दुनिया के हर बड़े शहर तक पहुँचती है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार और मीडिया कार्यकर्ता हैं, जो आर्थिक विषयों पर विशेषज्ञता रखते हैं)

♦♦

ममदानी प्रशासन आवास, परिवहन और उपयोगिता सेवाओं पर मूल्य नियंत्रण, सामाजिक निवेश और पारदर्शिता के उपाय लाता है, तो यह न केवल अमेरिकी बल्कि वैश्विक आर्थिक सोच को भी प्रभावित कर सकता है। इससे रिपब्लिकन और डेमोक्रेट दोनों पार्टियों को नागरिक कल्याण पर अपनी भूमिका पर पुनर्विचार करना पड़ सकता है। हालाँकि रियल एस्टेट लॉबी, निजी ट्रांज़िट कंपनियाँ और कॉर्पोरेट हित समूह आसानी से पीछे हटने वाले नहीं हैं। वे अदालतों से लेकर सिटी हॉल तक प्रतिरोध खड़ा करेंगे। असली सवाल यह है कि क्या ममदानी इन कॉर्पोरेट दबावों से ऊपर उठकर शासन को 'जन-प्रथम' दिशा दे पाएँगे। कई लोग उन्हें दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल से तुलना कर रहे हैं, जिन्होंने मुफ्त बस यात्रा, शिक्षा और स्वास्थ्य में सुधार के प्रयास किए थे-परंतु नौकरशाही और राजनीतिक विरोध के चलते सीमित सफलता ही पा सके। यदि न्यूयॉर्क महंगाई पर आक्रामक नियंत्रण की दिशा में ठोस कदम उठाता है-जैसे किराया, परिवहन, स्वास्थ्य खर्च और आवश्यक वस्तुओं के मूल्य पर अंकुश-तो दुनिया के अन्य शहर भी उससे प्रेरणा ले सकते हैं। इससे कंपनियों के सामने दो विकल्प होंगे: या तो वे मूल्य स्थिरता में सहयोग करें और सेवा गुणवत्ता सुधारें, या फिर राज्य और संघीय स्तर पर लॉबिंग करके सुधारों को रोकने की कोशिश करें।

♦♦

रूस-यूक्रेन युद्ध : शांति की उम्मीदें तेज

गोपाल मिश्र

रूस-यूक्रेन युद्ध के लगभग एक दशक लंबे संघर्ष के अंत की उम्मीदें एक बार फिर प्रबल हो गई हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के शांति एजेंडा के कारण पूर्वी यूरोप में स्थिरता की संभावना बढ़ रही है, भले ही यूरोपीय सहयोगी अभी भी हिचकिचाहट दिखा रहे हों। यह वही ट्रंप हैं जिन्होंने अपने पहले कार्यकाल में अफ़ग़ानिस्तान में लगभग 20 वर्ष तक चले अमेरिकी नेतृत्व वाले सैन्य अभियान को समाप्त किया था। इस वर्ष उनकी टीम ने पश्चिम एशिया में शांति प्रयासों को आगे बढ़ाया। ट्रंप दावा करते रहे हैं कि उन्होंने मई में मध्यरात्रि कूटनीति के ज़रिए भारत-पाकिस्तान के बीच तनाव को भी रोका था—हालाँकि नई दिल्ली ने इसका खंडन किया।

जेनेवा वार्ता और अमेरिकी दबाव : नवंबर के चौथे सप्ताह में विदेश मंत्री मार्को रुबियो के नेतृत्व में अमेरिकी दल ने यूक्रेनी प्रतिनिधियों को यह स्पष्ट संदेश दिया कि रूस के साथ संरचित शांति ही एकमात्र व्यावहारिक विकल्प है। पश्चिमी समर्थन के बावजूद यूक्रेन धीरे-धीरे अपना भूभाग खो रहा है, इसलिए सुरक्षा और संप्रभुता बचाने का व्यावहारिक तरीका यही है कि वह शांति प्रस्तावों पर गंभीरता से विचार करे। यूक्रेन को यह भी संकेत दिया गया कि उसे नाटो सदस्यता की महत्वाकांक्षा छोड़नी होगी—वह गठबंधन जिसे पश्चिमी शक्तियाँ शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद भी बनाए हुए हैं। ट्रंप का मानना है कि नाटो की लागत अमेरिका पर अत्यधिक बोझ बन रही है और सहयोगियों को इसका अधिक भार उठाना चाहिए।

प्रस्तावित शांति समझौता : यह व्यापक शांति योजना रूस-यूक्रेन संघर्ष को समाप्त करने की कोशिश है, जिसने दोनों देशों के बीच सदियों से चले आ रहे सांस्कृतिक और जातीय रिश्तों को गहरी चोट पहुँचाई है। योजना में यूक्रेन को सुरक्षा गारंटी और रूस को यह आश्वासन शामिल है कि उसे नाटो विस्तार से खतरा नहीं होगा।

संघर्ष की शुरुआत 2014 में तब हुई जब रूस ने क्रीमिया का अधिग्रहण कर लिया। 2022 में रूसी आक्रमण ने हालात को पूर्ण युद्ध में बदल दिया। पश्चिम समर्थक माने जाने वाले हास्य कलाकार वोलोदिमिर ज़ेलेंस्की के राष्ट्रपति बनने के बाद रूस-यूक्रेन रिश्ते और बिगड़ गए।

मॉस्को का प्रारंभिक अनुमान था कि यूक्रेन जल्दी घुटने टेक देगा, पर इसके विपरीत, युद्ध ने यूक्रेनियों में राष्ट्रीय पहचान और संप्रभुता की भावना को और प्रबल किया।

ऐतिहासिक रिश्ते और पश्चिम का प्रभाव : यूक्रेन सदियों तक रूसी साम्राज्य का हिस्सा रहा। पश्चिमी यूक्रेन एक समय ऑस्ट्रो-हंगेरियन साम्राज्य के अधीन था, पर प्रथम विश्वयुद्ध और बोल्शेविक क्रांति के बाद दोनों हिस्से सोवियत संघ में शामिल हो गए।

द्वितीय विश्वयुद्ध में नाज़ी जर्मनी के खिलाफ लड़ाई में यूक्रेनी लोगों ने भारी बलिदान दिया, जिसकी मान्यता स्वरूप 1954 में निकिता ख्रुश्चेव ने क्रीमिया को यूक्रेन के प्रशासनिक नियंत्रण में दे दिया।

1991 में सोवियत संघ के विघटन के बाद यूक्रेन स्वतंत्र राष्ट्र बना। रूस ने इस प्रक्रिया में सहयोग किया था, लेकिन पश्चिम की लंबे समय से चली आ रही रूस-भय मानसिकता ने 1990 के बाद फिर जन्म लिया। धीरे-धीरे पश्चिम समर्थित समूहों ने यूक्रेन में रूसी सांस्कृतिक प्रभाव को कमजोर करना शुरू किया।

नाटो का वारसा संधि के समाप्त होने के बाद भी विस्तार जारी रहा। रूस के पहले राष्ट्रपति बोरिस येल्त्सिन द्वारा नाटो सदस्यता में रुचि दिखाने के बावजूद यह पहल लंबित रखी गई, जबकि वारसा पैक्ट के अधिकांश देश नाटो में शामिल हो गए।

मानवीय क्षति और युद्ध का वर्तमान स्वरूप : 24 फरवरी 2022 से जारी युद्ध अब द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद यूरोप का सबसे बड़ा संघर्ष बन चुका है। अनुमान है कि लगभग पाँच लाख यूक्रेनी सैनिक मारे जा चुके हैं और लाखों नागरिक विदेशों में शरण लेने को मजबूर हुए हैं। जनवरी 2024 में यूक्रेन के पूर्व अटॉर्नी जनरल यूरी लुत्सेंको ने दावा किया था कि पाँच लाख सैनिक मारे या घायल हो चुके हैं और हर महीने लगभग 30,000 सैनिक हताहत हो रहे हैं।

बदलती कूटनीति और विरोधाभासी प्रतिक्रियाएँ : ट्रंप की पहल को यूरोपीय देशों ने मिश्रित प्रतिक्रिया दी है। अमेरिका चाहता है कि रूस तुरंत शांति समझौते पर सहमत हो, लेकिन यूरोपीय मीडिया के अनुसार यह यूक्रेन की संप्रभुता को प्रभावित कर सकता है।

हालाँकि, अमेरिका और यूक्रेन ने आपसी वार्ता के आधार पर 28-बिंदु शांति योजना को घटाकर 19 बिंदुओं में बदल दिया है, और कई विवादास्पद प्रावधानों में यूक्रेन की स्थिति के अनुरूप संशोधन किए गए हैं।

यूके ने भी ट्रंप की शांति पहल का समर्थन किया है, यह कहते हुए कि यूक्रेन को नाटो सदस्यता की कोशिश छोड़ देनी चाहिए और रूस तुरंत युद्ध समाप्त कर सकता है।

नई दिल्ली के सामरिक विशेषज्ञ यूरोपीय दृष्टिकोण से सहमत नहीं हैं। उनका मत है कि अमेरिकी प्रयास अब यूक्रेन की चिंताओं को अधिक गंभीरता से संबोधित कर रहे हैं।

अक्टूबर में हुई उस कथित बैठक की भी चर्चा है जिसमें ट्रंप के सहयोगियों और एक रूसी प्रतिनिधि के बीच शांति योजना पर विचार-विमर्श हुआ बताया गया—हालाँकि इसकी पुष्टि नहीं हुई है।

आशा की किरण : इन सबके बीच, यूरोप में स्थायी शांति की उम्मीद अभी भी जीवित है। ट्रंप प्रशासन की नई सक्रियता, रूस और यूक्रेन के बदलते रुख, और यूरोपीय देशों की व्यावहारिक चिंताओं के बीच यह शांति प्रक्रिया निर्णायक चरण में प्रवेश कर चुकी है। युद्ध की भारी मानवीय और आर्थिक कीमत को देखते हुए दुनिया को आशा है कि इस बार शांति की कोशिशें केवल कूटनीतिक दस्तावेज़ बनकर न रह जाएँ, बल्कि युद्ध-विराम और स्थिरता की दिशा में ठोस कदम साबित हों। ■■

द्विपक्षीय संबंधों में ठहराव के बाद फिर उभर रहा है सहयोग का नया अध्याय

भारत-कनाडा : नया भरोसा, नई गति

भारत और कनाडा के बीच पिछले कुछ वर्षों में उत्पन्न तनाव और अनिश्चितताओं के बावजूद आर्थिक सहयोग की धारा एक बार फिर गति पकड़ती दिखाई दे रही है। विदेश मंत्रियों के परस्पर दौरों के बाद नवंबर में हुई वाणिज्य मंत्रियों की बैठक ने दोनों देशों की प्रतिबद्धता को नए सिरे से रेखांकित किया। नई दिल्ली में कनाडाई अंतरराष्ट्रीय व्यापार मंत्री मनिंदर सिद्धू और भारतीय वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री पीयूष गोयल के बीच हुई मुलाक़ात न केवल राजनीतिक स्तर पर बदलाव का संकेत मानी जा रही है, बल्कि इसे दीर्घकालिक रणनीतिक साझेदारियों की दिशा में उठाया गया निर्णायक कदम भी बताया जा रहा है।

बैठक के अंत में एक संयुक्त बयान जारी किया गया, जिसके अनुसार 2024 में भारत-कनाडा द्विपक्षीय वस्तु और सेवा व्यापार बढ़कर 23.66 अरब अमेरिकी डॉलर तक पहुँच गया। इसमें वस्तु व्यापार 8.98 अरब डॉलर रहा-जो पिछले वर्ष की तुलना में 10 प्रतिशत अधिक है। ऐसे समय में जब वैश्विक अर्थव्यवस्था भू-राजनीतिक तनावों और सप्लाई चेन व्यवधानों से जूझ रही है, यह वृद्धि अपने आप में महत्वपूर्ण है।

नए कनाडाई नेतृत्व का संकेत : मनिंदर सिद्धू, मार्क कार्नी सरकार में कनाडा के पहले व्यापार मंत्री हैं, जिन्होंने 11 से 14 नवंबर तक भारत का आधिकारिक दौरा किया। उल्लेखनीय है कि वे हाल के महीनों में भारत आने वाले भारतीय मूल के दूसरे प्रमुख कनाडाई मंत्री हैं-इससे पहले अनीता आनंद भी नई दिल्ली जा चुकी हैं। इन यात्राओं को दोनों देशों के बीच 'नया भरोसा' और 'व्यावहारिकता की वापसी' के संकेत के रूप में देखा जा रहा है।

प्रभजोत सिंह

बैठक में दोनों मंत्रियों ने यह स्वीकार किया कि द्विपक्षीय निवेश प्रवाह में लगातार वृद्धि हो रही है-कनाडाई संस्थागत निवेशक भारत के बुनियादी ढाँचा, रियल एस्टेट, वित्तीय सेवाओं और नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्रों में सक्रिय हैं; वहीं भारतीय कंपनियाँ भी कनाडा में अपनी उपस्थिति का विस्तार कर रही हैं। दोनों मंत्रियों ने एक खुला, पारदर्शी और पूर्वानुमेय निवेश वातावरण बनाए रखने पर सहमति जताई।

महत्वपूर्ण खनिज, स्वच्छ ऊर्जा और एयरोस्पेस: भविष्य के स्तंभ : भारत-कनाडा संबंधों में सबसे अधिक संभावनाएँ महत्वपूर्ण खनिजों (Critical Minerals), स्वच्छ ऊर्जा और एयरोस्पेस जैसे क्षेत्रों में देखी जा रही हैं। भारत ऊर्जा संक्रमण के दौर से गुजर रहा है और स्वच्छ तकनीकों के लिए आवश्यक खनिजों-जैसे लिथियम, निकल, कोबाल्ट-की आपूर्ति सुनिश्चित करना उसकी प्राथमिकता है। कनाडा इन संसाधनों का एक विश्वसनीय स्रोत बन सकता है। सिद्धू और गोयल ने दीर्घकालिक सप्लाई चेन साझेदारियों को प्रोत्साहित करने और इन क्षेत्रों में विशेषज्ञ-स्तरीय संवाद शुरू करने पर सहमति व्यक्त की। एयरोस्पेस और द्वि-उपयोग प्रौद्योगिकियों में भी सहयोग बढ़ाने का निर्णय हुआ, जहाँ भारत में कनाडाई कंपनियों की मौजूदगी पहले से ही उल्लेखनीय है और भारत का उभरता विमानन बाज़ार नई संभावनाएँ पैदा कर रहा है।

वैश्विक सप्लाई चेन की चुनौतियों पर चर्चा : मंत्रियों ने हालिया वैश्विक व्यवधानों-कोविड-19 महामारी, यूक्रेन युद्ध, पश्चिम एशिया में तनाव, समुद्री मार्गों पर खतरे-से मिले सबक पर भी विचार किया। कृषि और खाद्य सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में सप्लाई चेन को मज़बूत और विविध बनाने की आवश्यकता को दोनों देशों ने समान रूप से महसूस किया। संयुक्त बयान में कहा गया कि विश्वसनीय और विविध सप्लाई चेन दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता की कुंजी हैं।

राजनीतिक स्तर पर गर्माहट की वापसी : यह सहयोग उस समय सामने आ रहा है जब कुछ वर्ष पहले द्विपक्षीय संबंध ठंडे पड़ गए थे। विदेश मंत्रियों द्वारा 13 अक्टूबर को जारी संयुक्त बयान- 'एक मजबूत साझेदारी की ओर गति का नवीनीकरण'-ने दोनों देशों की मंशा स्पष्ट कर दी थी। अब वाणिज्य मंत्रियों की बैठक भी उसी दिशा में एक ठोस प्रगति मानी जा रही है। दोनों मंत्रियों ने सहमति जताई कि अगले वर्ष की शुरुआत में व्यापार और निवेश समुदायों के साथ मंत्रीय संवाद को आगे बढ़ाया जाएगा, ताकि व्यावहारिक और तेज़ प्रगति सुनिश्चित हो सके।

50 वर्षों का अनुभव रखने वाले विशेषज्ञ की दृष्टि : विनिपेग निवासी और कनाडाई हिंदू चैंबर ऑफ कॉमर्स की ट्रेड कमेटी के अध्यक्ष हेमंत एम. शाह, जो पाँच दशकों से भारत-कनाडा व्यापार संबंधों को मजबूत करने में सक्रिय हैं, कहते हैं कि हाल की उच्च-स्तरीय यात्राएँ 'सिर्फ कूटनीति नहीं, बल्कि समय और दुनिया की बदलती दिशा का संकेत' हैं। उनका मानना है कि अब दोनों देशों को बिना देरी के मुक्त व्यापार समझौते (FTA) की वार्ताएँ फिर से शुरू कर देनी चाहिए।

वे स्पष्ट शब्दों में कहते हैं : 'दुनिया तेज़ी से बदल रही है। जब इतनी महत्वपूर्ण साझेदारी आपके हाथ में हो, तब ठहरना जोखिम भरा होता है। भारतवंशी कनाडाई समुदाय इस नए रिश्ते की आत्मा

होगा। हमारा भावनात्मक और आर्थिक जुड़ाव दोनों देशों के भविष्य को नई दिशा दे सकता है।'हेमंत शाह के अनुसार, हाल के वर्षों में संबंधों में जो खामोशी और तनाव रहा, उसने न केवल व्यापार जगत बल्कि प्रवासी भारतीयों को भी चिंतित किया। वे कहते हैं कि प्रधानमंत्री मार्क कार्नी के नेतृत्व में यह संबंध एक नया, सकारात्मक मोड़ लेता दिख रहा है। उनकी टिप्पणी कई सवाल उठाती है–क्या ट्रूडो युग में दोनों देशों की दूरियाँ बढ़ीं? क्या नई सरकार के तहत वे दूरियाँ कम होंगी? शाह की दृष्टि में जवाब स्पष्ट है :

'कार्नी सरकार समझती है कि भारत अब एक उभरती वैश्विक शक्ति है–1.4 अरब लोगों की ऊर्जा और प्रतिभा के साथ एक जीवंत बाज़ार। कनाडा पुराने बाज़ारों पर अब निर्भर नहीं रह सकता, ट्रंप के टैरिफ़ ने यह बात स्पष्ट कर दी थी। अब आगे देखने का समय है—और भारत जैसा साझेदार हमारे पास हो, तो यह यात्रा और भी सार्थक हो जाती है।'

प्राकृतिक पूरकता-सहयोग की नई जमीन : शाह इस बात पर ज़ोर देते हैं कि दोनों देशों की अर्थव्यवस्थाएँ स्वाभाविक साझेदार हैं–

- कनाडा: ऊर्जा, खनिज, पर्यावरणीय समाधान, कृषि–खाद्य क्षेत्र में मज़बूत
- भारत: विशाल बाज़ार, तेज़ी से बढ़ता विनिर्माण, कुशल मानव संसाधन, डिजिटल नवाचार

वे कहते हैं, 'दोनों देशों की शक्तियाँ एक–दूसरे को ऐसे पूरा करती हैं जैसे किसी पहेली के सही हिस्से। यह संबंध 60 साल पुरानी मित्रता और साझा मूल्यों पर खड़ा है। अब इसे नई ऊँचाई देने का सही समय है।' शाह बार–बार इस बात पर बल देते हैं कि प्रवासी भारतीय समुदाय इस साझेदारी में प्रेरक शक्ति बन सकता है– 'कनाडा से प्रेम और भारत से भावनात्मक जुड़ाव–हमारी यही दोहरी पहचान दोनों देशों को करीब लाने में मदद कर सकती है। समुदाय को आगे आना चाहिए और कनाडा के भविष्य को सही दिशा देने में योगदान देना चाहिए।'

भविष्य की दिशा : नई दिल्ली में हुई वाणिज्य मंत्रियों की बैठक ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भारत और कनाडा केवल अतीत के मतभेदों को पीछे छोड़ने की कोशिश नहीं कर रहे, बल्कि वे भविष्य की आवश्यकताओं और अवसरों को देखते हुए रणनीतिक, दीर्घकालिक साझेदारी बनाने का लक्ष्य भी तय कर रहे हैं। महत्वपूर्ण खनिजों से लेकर स्वच्छ ऊर्जा और एयरोस्पेस तक–दोनों देशों के बीच सहयोग के नए क्षेत्र खुल रहे हैं। निवेश, प्रौद्योगिकी साझाकरण और सप्लाई चेन विविधीकरण जैसे मुद्दे इस नए अध्याय की आधारशिला बन रहे हैं।

क्या यह 'नया भरोसा' वास्तव में स्थायी साबित होगा? यह आने वाले वर्षों में नीति–निर्माताओं की दृढ़ता, उद्योग जगत की भूमिका और प्रवासी भारतीय समुदाय के नेतृत्व पर निर्भर करेगा। लेकिन इतना तय है कि भारत–कनाडा संबंधों की यह नई शुरुआत एक ऐसे समय में हो रही है जब दुनिया को विश्वसनीय, संतुलित और बहुपक्षीय आर्थिक साझेदारियों की पहले से कहीं ज़्यादा आवश्यकता है।

(लेखक प्रभजोत सिंह वरिष्ठ पत्रकार हैं और खेल पत्रकारिता में उनका विशेष स्थान है)

♦♦

भारत-कनाडा संबंधों में सबसे अधिक संभावनाएँ महत्वपूर्ण खनिजों स्वच्छ ऊर्जा और एयरोस्पेस जैसे क्षेत्रों में देखी जा रही हैं। भारत ऊर्जा संक्रमण के दौर से गुजर रहा है और स्वच्छ तकनीकों के लिए आवश्यक खनिजों-जैसे लिथियम, निकल, कोबाल्ट-की आपूर्ति सुनिश्चित करना उसकी प्राथमिकता है। कनाडा इन संसाधनों का एक विश्वसनीय स्रोत बन सकता है। सिद्धू और गोयल ने दीर्घकालिक सप्लाई चेन साझेदारियों को प्रोत्साहित करने और इन क्षेत्रों में विशेषज्ञ-स्तरीय संवाद शुरू करने पर सहमति व्यक्त की। एयरोस्पेस और द्वि-उपयोग प्रौद्योगिकियों में भी सहयोग बढ़ाने का निर्णय हुआ, जहाँ भारत में कनाडाई कंपनियों की मौजूदगी पहले से ही उल्लेखनीय है और भारत का उभरता विमानन बाज़ार नई संभावनाएँ पैदा कर रहा है। मंत्रियों ने हालिया वैश्विक व्यवधानों-कोविड-19 महामारी, यूक्रेन युद्ध, पश्चिम एशिया में तनाव, समुद्री मार्गों पर खतरे-से मिले सबक पर भी विचार किया। कृषि और खाद्य सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में सप्लाई चेन को मज़बूत और विविध बनाने की आवश्यकता को दोनों देशों ने समान रूप से महसूस किया। संयुक्त बयान में कहा गया कि विश्वसनीय और विविध सप्लाई चेन दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता की कुंजी हैं।

♦♦

राष्ट्र निर्माताओं को सादर नमन

दिसम्बर का महीना वैसे भी हमारे कई महान नेताओं के जन्म और पुण्यतिथियों का महीना है-वे सभी जिन्होंने राष्ट्र-निर्माण में अपने-अपने ढंग से महत्वपूर्ण योगदान दिया। डॉ राजेंद्र प्रसाद भारत के प्रथम राष्ट्रपति, किसानों के मसीहा चौधरी चरण सिंह, अटल बिहारी वाजपेई, संजय गांधी की जन्मतिथि है तथा बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर, विश्वनाथ प्रताप सिंह, पी.वी. नरसिम्हा राव, मनमोहन सिंह की पुण्यतिथि है। इस अंक में हम उनके योगदान को भी स्मरण कर रहे हैं, अपने नियमित स्तंभों और विशिष्ट फीचर्स के साथ।

दिसम्बर 3 : जयंती - डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

आजाद भारत के प्रथम राष्ट्रपति, सरलता, सत्यनिष्ठा और राष्ट्रभक्ति के अमर प्रतीक

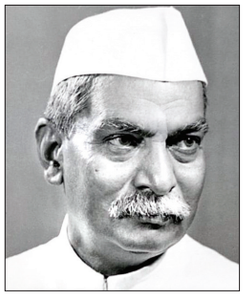

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के ऐसे महान नेता थे, जिन्होंने अपने व्यक्तित्व में विनम्रता, त्याग और कर्तव्यनिष्ठा को जीवंत रूप दिया। 3 दिसंबर 1884 को बिहार के जीरादेई में जन्मे डॉ. प्रसाद प्रारम्भ से ही विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। वकालत में अपार सफलता के बावजूद उन्होंने राष्ट्रसेवा को जीवन का उद्देश्य बनाया। महात्मा गांधी के आह्वान पर उन्होंने सब कुछ छोड़कर असहयोग और नमक सत्याग्रह जैसे आंदोलनों में सक्रिय भूमिका निभाई। स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति के रूप में उन्होंने संविधान की मर्यादा, लोकतांत्रिक मूल्यों और नैतिक राजनीति की मिसाल कायम की। उनकी कार्यशैली में सादगी, जनता के प्रति संवेदनशीलता और राष्ट्रहित सर्वोपरि था।

'देश रत्न' डॉ. राजेन्द्र प्रसाद भारतीय राजनीति के उस आदर्श को दर्शाते हैं जिसकी आज भी प्रेरणा ली जाती है। उनका जीवन राष्ट्र के लिए एक कुशल अधिवक्ता के रूप में था। इसी कारण उनके जन्मदिन को अधिवक्ता दिवस के रूप में भी मनाया जाता है।

दिसम्बर 23 : जयंती - चौधरी चरण सिंह

किसान-हित और स्वाभिमान के शिल्पी

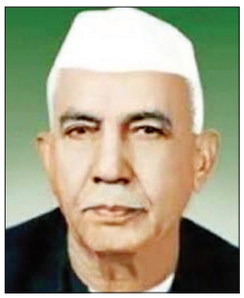

जन्म 23 दिसम्बर 1902 को उत्तर प्रदेश के नूरपुर गाँव में हुआ। वे भारतीय राजनीति में उस परंपरा के प्रतिनिधि थे, जिसने किसानों, मजदूरों और ग्रामीण भारत की समस्याओं को राष्ट्र की मुख्य धारा में लाने का संघर्ष किया। ज़मीन सुधार, बिचौलियों की समाप्ति और कृषि आधारित अर्थव्यवस्था की मजबूती के लिए उनकी नीतियाँ दूरदर्शी मानी जाती हैं। वे मानते थे कि भारत की वास्तविक शक्ति उसके खेतों और गाँवों में बसती है; इसलिए किसानों की आर्थिक स्वतंत्रता ही राष्ट्रीय विकास का आधार है। चौधरी चरण सिंह भारतीय राजनीति के एक प्रमुख नेता थे, जिन्हें उनकी सादगी, ईमानदारी और किसानों के प्रति समर्पण के लिए जाना जाता है। उन्होंने कहा था, 'राजनीति केवल शहरी अभिजात्य वर्ग का खेल नहीं है,' जो उनके दृष्टिकोण को दर्शाता है।

दिसम्बर 25 : जयंती - अटल विहारी वाजपेयी

राजनीति के हृदय पुरुष और आधुनिक भारत के शिल्पकार

जन्म 25 दिसंबर 1924 को ग्वालियर में हुआ। वे भारतीय राजनीति के ऐसे बहुआयामी व्यक्तित्व थे जिन्होंने संवेदनशील हृदय, ओजस्वी वाणी और दूरदर्शी नेतृत्व से देश को नई दिशा दी। राष्ट्रवाद उनके लिए केवल विचार नहीं, बल्कि आचरण की कसौटी था। तीन बार देश के प्रधानमंत्री बने वाजपेयी ने परमाणु परीक्षणों से भारत की सामरिक शक्ति को नई पहचान दी, तो दूसरी ओर 'सड़क से सदन' तक विकास का मार्ग प्रशस्त करते हुए स्वर्णिम चतुर्भुज जैसे ऐतिहासिक परियोजनाओं की नींव रखी।

उनका व्यक्तित्व राजनीति में गरिमा, संवाद, सहमति और लोकतांत्रिक परंपराओं का जीवंत स्मारक था। संसद हो या कविताओं का मंच—उन्होंने शब्दों से नहीं, भावना से देश का विश्वास जीता। वे मानते थे कि 'सरकारें आएँगी-जाएँगी, लेकिन देश रहना चाहिए।' अटल जी का जीवन आदर्श नेतृत्व, उदारता और राष्ट्रप्रेम की ऐसी ज्योति है, जो पीढ़ियों को प्रेरित करती रहेगी।

दिसम्बर 14 : जयंती - संजय गांधी

तेज फैसलों और तूफानी नेतृत्व की याद

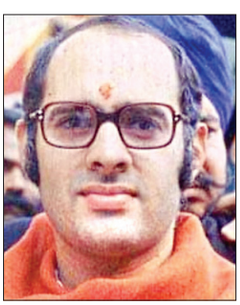

भारतीय राजनीति के उस युवा शख्स को याद करने का दिन है जिसने कम उम्र में सत्ता के पूरे ढाँचे को हिलाकर रख दिया। संजय गांधी ने राजनीति में 'इंतज़ार' और 'समझौते' की जगह 'फैसला' और 'परिणाम' को तरजीह दी। उनकी शैली सीधी, तेज़ और बिंदास थी-जहाँ सुधारों को फ़ाइलों में नहीं, ज़मीन पर उतरते देखा जाता था। पर्यावरण से लेकर शहरी विकास तक, परिवार-कल्याण से लेकर युवा संगठन तक हर क्षेत्र में वे बदलाव को आंदोलन की गति से आगे बढ़ाना चाहते थे। समर्थकों के लिए वे आधुनिक भारत की तेज़ रफ़्तार का चेहरा थे; विरोधियों के लिए कठोर, लेकिन अनदेखा न किए जा सकने वाला नेता। संजय गांधी भले ही अल्पायु रहे, पर उनका प्रभाव आज भी राजनीतिक स्मृति में तेज़ धार की तरह मौजूद है—एक ऐसा नेता जो आया भी तूफ़ान की तरह और गया भी तूफ़ान बनकर।

दिसम्बर 6 : पुण्यतिथि - डॉ. भीमराव अंबेडकर

समाज में न्याय और समता की मशाल जलाने वाले बाबा साहब

भारत के सामाजिक न्याय, समानता और मानवाधिकारों के प्रति उनके अद्वितीय योगदान को स्मरण करने का पावन दिन है। वे केवल भारतीय संविधान के शिल्पकार ही नहीं, बल्कि समाज के सबसे वंचित वर्गों के उत्थान के लिए आजीवन संघर्ष करने वाले महान मानवतावादी, अर्थशास्त्री और चिंतक थे।

अंबेडकर ने छुआछूत, जातिगत भेदभाव और सामाजिक असमानताओं के विरुद्ध आवाज उठाकर भारतीय समाज को नई दिशा दी। उनके द्वारा संविधान में संस्थापित प्रत्येक भारतीय को समान अधिकार, स्वतंत्रता और न्याय की गारंटी दी।

उन्होंने शिक्षा को मुक्ति का मार्ग बताया और अपने जीवन से सिद्ध किया कि ज्ञान ही व्यक्ति को सशक्त बनाता है। इस दिन हम उनके विचारों से प्रेरणा लेते हुए संकल्पित होना चाहिए कि एक न्यायपूर्ण, समतामूलक और प्रगतिशील भारत के निर्माण में अपना योगदान देंगे। डॉ. अंबेडकर का संदेश आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना उनके जीवनकाल में था।

दिसम्बर 23 : पुण्यतिथि - पी. वी. नरसिम्हा राव

राष्ट्रीय सुरक्षा और प्रशासनिक सुधारों में उनका योगदान

पी. वी. नरसिम्हा राव भारतीय राजनीति के उन विलक्षण नेताओं में थे, जिन्होंने कठिनतम परिस्थितियों में देश को नई दिशा दी। 1991 में प्रधानमंत्री बनने पर देश गंभीर आर्थिक संकट से जूझ रहा था–विदेशी मुद्रा भंडार घट चुका था, रोजगार ठप थे और विकास लगभग रुक गया था। ऐसे समय राव ने अपने दूरदर्शी नेतृत्व से आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के ऐतिहासिक कदम उठाए। यह वही नीतिगत परिवर्तन था जिसने भारत को बंद अर्थव्यवस्था से उभरते वैश्विक शक्ति राष्ट्र की राह पर अग्रसर किया। राव न केवल कुशल प्रशासक थे, बल्कि बहुभाषी विद्वान, गहन चिंतक और प्रखर रणनीतिकार भी थे। विदेश नीति, राष्ट्रीय सुरक्षा और प्रशासनिक सुधारों में उनका योगदान आज भी प्रासंगिक माना जाता है। 23 दिसम्बर को उनकी पुण्यतिथि राष्ट्र को यह स्मरण कराती है कि दृढ़ इरादों और शांत नेतृत्व से देश का भविष्य बदला जा सकता है। राव का जीवन आधुनिक भारत के पुनर्निर्माण की एक महत्वपूर्ण आधारशिला है।

नवम्बर 27 : पुण्यतिथि - विश्वनाथ प्रताप सिंह

जनकल्याण और नैतिक राजनीति के प्रतीक

भारत की राजनीति में एक ऐसे आदर्श नेता थे जिन्होंने सत्ता को साध्य नहीं, साधन माना। वी.पी. सिंह ने राजनीतिक जीवन में नैतिकता, पारदर्शिता और सामाजिक न्याय को सर्वोपरि रखा। भ्रष्टाचार के विरुद्ध अनेक प्रकरण में उनके साहसिक रुख ने उन्हें 'दृढ प्रतिज्ञ' राजनेता की पहचान दिलाई। प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने सामाजिक न्याय स्थापित करने हेतु मंडल कमीशन की सिफारिशें लागू कर समाज के पिछड़े वर्गों को न्याय दिलाने की ऐतिहासिक पहल की। सत्ता खोने की कीमत पर भी निर्णय से पीछे न हटना उनके दृढ़ चरित्र का प्रमाण है।

जनता की अपेक्षाओं, उनके अधिकारों और समान अवसरों की लड़ाई को उन्होंने जीवनभर अपनी प्रतिबद्धता बनाया। वी.पी. सिंह भारतीय लोकतंत्र में उस राजनीति का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसमें संवेदनशीलता, सिद्धांत और साहस साथ-साथ चलते हैं। उनके योगदान को राष्ट्र आदरपूर्वक स्मरण करता है। जिन्होंने 2 दिसंबर 1989 से 10 नवंबर 1990 तक भारत के 8वें प्रधानमंत्री के तौर पर काम किया। उन्हें खास तौर पर मंडल कमीशन की सिफारिशों को लागू करने के उनके फैसले के लिए याद किया जाता है, जिसने केंद्र सरकार की सेवाओं में अन्य पिछड़े वर्गों के लिए 27% नौकरियों में आरक्षण दिया था।

दिसम्बर 26 : पुण्यतिथि - डॉ. मनमोहन सिंह

दूरदर्शी नेतृत्व की अनोखी उपलब्धियाँ

भारत के प्रधानमंत्री के रूप में डॉ. मनमोहन सिंह का दशक (2004–2014) आधुनिक भारत की दिशा बदलने वाला काल माना जाता है। उनकी शांत, सौम्य और विद्वत्तापूर्ण नेतृत्व शैली ने देश को स्थिरता, विकास और वैश्विक सम्मान दिलाया। उनके शासन में मनरेगा जैसा ऐतिहासिक कानून लागू हुआ, जिसने ग्रामीण गरीबों को रोजगार की कानूनी गारंटी दी। सूचना का अधिकार (RTI) और शिक्षा का अधिकार (RTE) जैसे परिवर्तनकारी कानूनों ने लोकतंत्र और शिक्षा प्रणाली को नई मजबूती दी।

भारत-अमेरिका असैन्य परमाणु समझौते ने भारत की वैश्विक स्थिति को मजबूत किया और ऊर्जा सुरक्षा की नई संभावनाएँ खोलीं। आधार परियोजना ने डिजिटल भारत की नींव रखी, जबकि राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन ने स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच बढ़ाई। डॉ. सिंह का कार्यकाल आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय और पारदर्शिता के संतुलन का उत्कृष्ट उदाहरण रहा। उनकी नीतियाँ आज भी भारत की प्रगति की आधारशिला कही जाती हैं।

एक मशहूर भारतीय अर्थशास्त्री और राजनेता, जिन्होंने भारत के 13वें प्रधानमंत्री के तौर पर काम किया। उन्हें 1991 में भारत के आर्थिक उदारीकरण के आर्किटेक्ट के तौर पर जाना जाता है।

संपादकाचार्य, स्वाधीनता सेनानी स्व. के. रामा राव

9 नवम्बर, 1896 - 9 मार्च, 1961

प्रख्यात सम्पादक, जाने-माने स्वाधीनता-सेनानी और प्रथम संसद (राज्य सभा) के सदस्य (1952), श्री कोटमराजू रामा राव अपने दौर के अकेले ऐसे पत्रकार थे, जो 25 से अधिक समाचार-पत्रों में कार्यशील रहे। इन पत्र-पत्रिकाओं में अविभाजित भारत के लाहौर से प्रकाशित (लाला लाजपत राय का) दि पीपुल (1936), कराची का दैनिक दि सिन्ध आब्जर्वर (1921), मुम्बई का दि टाइम्स ऑफ इण्डिया (1924), चेन्नई का दि स्वराज्य (1935), कोलकाता का दि फ्री इण्डिया (1934), नई दिल्ली का दि हिन्दुस्तान टाइम्स (1938), इलाहाबाद के दि लीडर (1920) और दि पायोनियर (1928) तथा पटना का दि सर्चलाइट दैनिक (1950) थे। किन्तु रामा राव जी को ऐतिहासिक ख्याति मिली जब उन्होंने जवाहरलाल नेहरू के दैनिक दि नेशनल हेरल्ड (1938-1946) का लखनऊ में सम्पादन किया। ढेर सारे अखबार बदलने पर रामा राव के एक साथी ने टिप्पणी की- 'वे अपने एक जेब में संपादकीय की प्रति और दूसरे में त्यागपत्र रखते थे।'

चीराला (आन्ध्र प्रदेश) में 9 नवम्बर 1896 को जन्मे, तेलुगु-भाषी रामा राव ने मद्रास विश्वविद्यालय से 1917 में अंग्रेजी साहित्य से स्नातक परीक्षा पास की और वहीं अंग्रेजी भाषा का अध्यापन भी किया। पत्रकारिता में उनका प्रवेश चेन्नई में ब्रह्मसमाज की पत्रिका दि ह्यूमेनिटी से हुआ। फिर आचार्य टी. एल (साधू) वासवानी के दि न्यू टाइम्स (1919) में कराची में उन्होंने कार्य किया। अपने अग्रज, संपादक के. पुन्नय्या के दैनिक दि सिंध आब्जर्वर में सह-संपादक बने। चार दशक के अपने पत्रकारी जीवन में रामा राव ने दो विश्व युद्धों के दौर की घटनाएँ, गाँधी-नेहरू युग का स्वाधीनता-संघर्ष और स्वातंत्रयोत्तर भारत में आर्थिक नियोजन, निर्गुट विदेश नीति तथा मीडिया आधुनिकीकरण को देखा और उन पर लिखा।

जेल की सजा : महात्मा गाँधी के सान्निध्य में रहकर (1942-45) रामा राव ने दो दर्जन

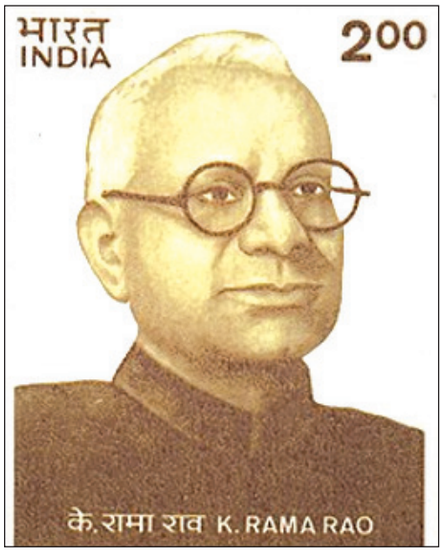

से ज्यादा भारतीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं के विशेष संवाददाता के रूप में राष्ट्रीय आंदोलनों की रपट भेजी। केन्द्रीय विधान सभा, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशनों तथा राजनीतिक मुकदमों और क्रिकेट टेस्ट मैचों की रिपोर्टिंग की। उन्होंने बड़ी संख्या में युवा पत्रकारों को प्रशिक्षित किया, जिनमें रहे शाम लाल (बाद में टाइम्स आफ इंण्डिया के प्रधान संपादक), एच. वाई. शारदा प्रसाद (इन्दिरा गांधी के मीडिया सलाहकार) और एम. चलपति राव जो नेशनल हेरल्ड में तेरहवें स्थान पर आये थे और बाद में सम्पादक बने। रामाराव के प्रशिक्षु का नाम था श्री बालकृष्ण मेनन जो सन्यास लेकर स्वामी चिंम्यानन्द सरस्वती कहलाए।

सन् 1942 में रामा राव को दि नेशनल हेरल्ड में जेल या जंगल शीर्षक के संपादकीय लिखने पर ब्रिटिश हुकूमत ने छह माह का कारावास और जुर्माना की सजा दी थी। इस संपादकीय में उन्होंने लखनऊ कैंप जेल में कांग्रेसी सत्याग्रहियों पर हुए बर्बर अत्याचार की भर्त्सना की थी। अवध चीफ कोर्ट के निर्णय को आधे घन्टे में रेडियो बर्लिन ने प्रसारित कर दिया था। लखनऊ जेल के क्रान्तिकारी वार्ड में रामा राव को नजरबंद रखा गया, जहाँ उनके पूर्व मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू, आचार्य जे. बी. कृपलानी, आर. एस. पंडित (पं. नेहरू के बहनोई) आदि कैद थे। रामा राव के जेल के साथियों में थे भगत सिंह वाले लाहौर षड्यंत्र केस के क्रान्तिकारी शिव वर्मा तथा जयदेव कपूर, कम्युनिस्ट काली शंकर, विप्लवी जोगेश चटर्जी और लोहियावादी गोपाल नारायण सक्सेना। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री की यूरोप, अफ्रीका और अमेरीका यात्रा (1949) पर रामा राव दि हिन्दुस्तान टाइम्स ग्रुप (इलाहाबाद के दि लीडर तथा पटना के दि सर्चलाइट दैनिकों) के विशेष प्रतिनिधि के नाते गये। संयुक्त राष्ट्र अमेरीका के अलावा श्री रामा राव ने ब्रिटेन, फ्रांस, इटली, मिस्र, कनाडा, ब्राजील, ग्रीस (यूनान), स्विटजरलैण्ड आदि देशों की यात्रा भी की।

विद्रोही माता : श्री रामा राव प्रथम राज्य सभा (1952) के लिये अविभाजित मद्रास राज्य (आंध्र प्रांत) से कांग्रेस के प्रत्याशी के रूप में निर्वाचित हुए। इनके नाम का प्रस्ताव विधायक के. कामराज तथा नीलम संजीव रेड्डी ने किया था। दोनों बाद में कांग्रेस अध्यक्ष बने। भारत सरकार के प्रथम सलाहकार (1956) के नाते में रामा राव ने पंच-वर्षीय योजना के प्रचार-प्रसार का संचालन किया था। भारत सरकार ने 9 नवम्बर 1997 को श्री के रामा राव के जन्मशताब्दी-समारोह पर उनकी स्मृति में एक डाक टिकट और लिफाफा प्रकाशित किया था। इसे नयी दिल्ली के आंध्र प्रदेश भवन में उप-राष्ट्रपति स्वर्गीय कृष्ण कांत ने जारी किया था। तब मीडिया तथा कानून पर भारत के प्रधान न्यायाधीश न्यायमूर्ति जगदीश शरण वर्मा ने के. रामा राव स्मृति व्याख्यान दिया था। अध्यक्षता श्री रामा राव के भांजे एवं तत्कालीन चुनाव आयुक्त डा. जी.वी.जी. कृष्णमूर्ति ने की थी।

कई पुस्तकों के लेखक, रामा राव ने अपनी आत्मकथा दि पैन एज माई स्वोर्ड लिखी। अखिल भारतीय समाचारपत्र संपादक सम्मेलन (आल-इण्डिया न्यूजपेपर एडिटर्स कान्फ्रेंस, 1940) के संस्थापकों में रामा राव थे। देश के सम्पादकों ने मुम्बई में 1942 में हुए अपने AINEC अधिवेशन में राष्ट्रीय

कार्यकारिणी के लिए रामा राव को लखनऊ जेल में कैद रहते ही निर्वाचित किया था। भारतीय श्रमजीवी पत्रकार फेडरेशन (इंण्डियन फेडरेशन आफ वर्किंग जर्नलिस्ट्स) के उपाध्यक्ष (1950) की भूमिका में उन्होंने फेडरेशन के संविधान की रचना की। श्रमजीवी पत्रकारों के देश-विदेश के अधिवेशनों में शिरकत की। प्रथम भाषाई-राज्य आंध्र के निर्माण हेतु जनान्दोलन में सक्रिय रहे।

रामा राव ने अंग्रेजी भाषा की कवियित्री और ज्योतिषी सरसवाणी से सागरतटीय मछलीपत्तनम नगर (आन्ध्र प्रदेश) में 1922 में विवाह किया। इस पाणिग्रहण कार्य को मछलीपत्तनमवासी, बाद में कांग्रेस अध्यक्ष, स्वतंत्रता-सेनानी और मध्य प्रदेश के राज्यपाल स्व. डॉ. बी. पट्टाभि सीतारामय्या ने सम्पन्न कराया था। श्री रामा राव के श्वसुर प्रो. चोडवरपु जगन्नाथ राव टीचर्स ट्रेनिंग कालेज के प्रिंसिपल थे। रामा राव के चार पुत्रों में प्रथम प्रताप भारतीय विदेश सेवा (IFS) रिटायर होने पर अमरीका में बस गये थे। दूसरे नारायण भारतीय आडिट एवं अकाउन्ट्स सर्विस (IA&AS) से रिटायर होकर अब बैंगलोर, कर्नाटका में रहते हैं। वे त्रैमासिक जर्नल आफ एस्ट्रोलोजी के संपादक हैं। तृतीय विक्रम लखनऊ में श्रमजीवी पत्रकार थे। आखिरी सुभाष पूर्व राष्ट्रीयकृत बैंक मैनेजर थे। चार पुत्रियों में ज्येष्ठ वसंत तथा कनिष्ठ हेमन्त अमरीका में बस गई थीं। द्वितीय, शरद तथा तृतीय, शिशिर दोनों ने ही भारतीय सेना के अधिकारियों से विवाह कर कानपुर तथा बेंगलूर में बसीं।

जुनून से मुनाफे तक : भारतीय मीडिया की खोती हुई आत्मा

प्रो. बलदेव राज गुप्त

गत तीन-चार दशकों में भारतीय पत्रकारिता ने जिस तेज़ी से अपना रूप बदला है, वह केवल तकनीकी विकास की कहानी नहीं है; यह एक ऐसे पेशे के चरित्र, आत्मा और उद्देश्य के बदलने की दास्तान है, जिसने कभी लोगों के विश्वास को आकार दिया, समाज की दिशा तय की और सत्ता को आईना दिखाया। आज वही पत्रकारिता एक विशाल उद्योग में तब्दील हो चुकी है- जहाँ जुनून की जगह पेशेवर चतुराई ने, और सत्य के प्रति प्रतिबद्धता की जगह लाभ की अनिवार्यता ने ले ली है।

एक समय था जब पत्रकारिता एक मिशन थी-राष्ट्र और समाज की सेवा का माध्यम। रिपोर्टर छोटे-छोटे भत्तों पर शहर-गाँव का सफ़र करते थे, साइकिल या बस के भरोसे निकल पड़ते थे, लेकिन सच्चाई तक पहुंचने का उनका जज्बा अटूट होता था। उनका आत्मविश्वास, उनकी ईमानदारी और उनकी निष्ठा ही पत्रकारिता की पूँजी थी। किसी राज्य का बजट हो या केंद्र की कोई बड़ी योजना-समाचार पत्रों में जो छपता था, वह जनमत के निर्माण का आधार बन जाता था। संसाधन कम थे, तकनीक सीमित थी, पर जनता का भरोसा असीम था।

आज की स्थिति में यह भरोसा लगातार डगमगा रहा है। पत्रकारिता उन्नत तकनीक से लैस है, लेकिन उसकी आत्मा घायल दिखती है। 24×7 चैनल, डिजिटल पोर्टल, सोशल मीडिया-सभी तेजी से फैलती सूचनाओं के वाहक तो हैं, पर उसी गति से गलतियाँ भी फैल जाती हैं। सच और झूठ, सूचना और अफ़वाह, निष्पक्षता और एजेंडा-इन सबके बीच की रेखाएं धुंधली होती जा रही हैं।

कभी पत्रकारिता राजनीतिक चरित्र निर्माण या परिवर्तन का सबसे सशक्त साधन मानी जाती थी। इतिहास में अनेक उदाहरण हैं, जब एक छोटी-सी खबर ने पूरे सत्ता-संतुलन को बदल दिया। बाबू जगजीवन राम को प्रधानमंत्री पद के लिए संभावित दावेदार माना जा रहा था, पर उनके पुत्र से जुड़े एक कांड का खुलासा होते ही राजनीतिक समीकरण बदल गए। एक अख़बार की एक रिपोर्ट ने देश की राजनीति को नई दिशा दे दी।

इसके विपरीत आज ऐसी स्थिति बार-बार होती है कि बड़े नेता कैमरे पर आपत्तिजनक हालात में पकड़े जाते हैं, भ्रष्टाचार के दस्तावेज़ सामने आते हैं, निजी और सार्वजनिक जीवन में विरोधाभास उजागर होते हैं-फिर भी कोई ठोस कार्रवाई नहीं होती। वे चुनाव भी जीत जाते हैं, पद भी पा लेते हैं और मीडिया का एक हिस्सा उन्हें बचाने में जुट जाता है। यह केवल तकनीकी बदलाव नहीं, बल्कि जवाबदेही के ढहने का संकेत है।

डिजिटल और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने इस समस्या को और जटिल बना दिया है। टीवी डिबेट्स में चीखते-चिल्लाते प्रवक्ता, सोशल मीडिया पर ट्रोल आर्मी, और 'पहले दिखाओ, बाद में जांच करो' की होड़-इन सबने पत्रकारिता की विश्वसनीयता को कमजोर किया है।

डिजिटल मंचों पर कोई भी कुछ भी लिख या बोल सकता है और वह तुरंत लाखों लोगों तक पहुंच जाता है। सच और झूठ के बीच की दूरी कम हो गई है, लेकिन भ्रम और अविश्वास की खाई बढ़ गई है।

ऐसे समय में लिखित शब्द की गंभीरता और मूल्य का पुन: स्मरण आवश्यक हो जाता है। बोलते समय व्यक्ति भावनाओं में बह सकता है, उत्तेजित हो सकता है, और मंच की गर्मी में अपनी मर्यादा खो सकता है। लेकिन लिखना विचारशीलता की मांग करता है-वह स्थायी होता है, दस्तावेज़ का रूप ले लेता है और समय के साथ भी अपनी जवाबदेही से मुक्त नहीं होता। यही कारण है कि टीवी पर गालियाँ देने वाले प्रवक्ता भी लिखित रूप में माफी देने से कतराते हैं।

हाल में जिन्होंने मीडिया का करीब से अवलोकन किया है, वे देखते हैं कि गलत खबरें कैसे तेजी से फैलती हैं और फिर धीरे-धीरे व अनिच्छा के साथ सुधारी जाती हैं। अभिनेता धर्मेंद्र के निधन की झूठी खबर इसका ताज़ा उदाहरण है। एक प्रतिष्ठित मीडिया समूह ने बिना सत्यापन के यह समाचार चला दिया। सोशल मीडिया पर संवेदना संदेशों की बाढ़ आ गई। अंतत: उनके पुत्र सनी देओल को सामने आकर खबर का खंडन करना पड़ा, तब जाकर चैनलों ने सुधार किया। यह घटना मीडिया की जल्दबाजी, प्रतिस्पर्धात्मक दबाव और सत्यापन की उपेक्षा को उजागर करती है।

भारतीय मीडिया की यह स्थिति किसी नैतिक महाभारत की तरह लगती है—जहाँ सत्य और असत्य एक-दूसरे के इतने करीब आ गए हैं कि पहचान मुश्किल है। महाभारत में भी केवल युधिष्ठिर की वाणी को निर्विवाद सत्य माना जाता था। आज का मीडिया भी अपने युधिष्ठिर की तलाश में है—ऐसे साहसी, निष्पक्ष और बेदाग व्यक्तित्व की, जो सत्ता के दबाव, कॉर्पोरेट हितों और लोकप्रियता की राजनीति से ऊपर उठकर सत्य कह सके।

लेकिन यह गिरावट केवल व्यक्तियों की नहीं है; यह एक दार्शनिक संकट है। पत्रकारिता एक सेवा से वस्तु (कमोडिटी) बन गई है। कॉर्पोरेट स्वामित्व, विज्ञापनदाताओं का दबाव, सरकारी अनुदानों पर निर्भरता, राजनीतिक निकटता—इन सबने समाचार संस्थानों की स्वतंत्रता को सीमित किया है। जिनकी जिम्मेदारी सत्ता पर निगरानी रखने की थी, वे स्वयं सत्ता के उपकरण बनते जा रहे हैं। टीआरपी और क्लिक दरें संपादकीय प्राथमिकताओं को निर्धारित करने लगी हैं, और सामाजिक सरोकार हाशिये पर चले गए हैं। जनता भी इस बदलाव से प्रभावित है। पहले जनता का भरोसा एकजुट था—अख़बार ने लिखा है, मतलब सच है। आज वही जनता विभाजित है—हर समूह का अपना मीडिया है, अपना 'सच' है, अपना नैरेटिव है। यह विभाजन लोकतंत्र की सेहत के लिए खतरनाक है, क्योंकि लोकतंत्र तब मजबूत होता है जब तथ्य साझा होते हैं और बहस समान आधार पर होती है।

भारतीय मीडिया को अपने खोए हुए मूल्यों को पुन: पाना होगा। मुनाफा किसी भी संस्था के लिए महत्वपूर्ण है, लेकिन पत्रकारिता का लक्ष्य केवल व्यवसाय नहीं हो सकता। उसे फिर से यह समझना होगा कि उसका असली मूल्य उसकी विश्वसनीयता में है—उसकी निष्पक्षता, सत्यनिष्ठा और सामाजिक जिम्मेदारी में है। संपादकों और पत्रकारों को भी आत्ममंथन करना होगा। क्या वे सत्ता को चुनौती दे रहे हैं या उसके अनुरूप हो रहे हैं? क्या वे जनहित की खबरें उठा रहे हैं या चटपटी बहसों पर समय जाया कर रहे हैं? क्या वे समाज को जागरूक कर रहे हैं या भ्रमित?

अंतत:, पत्रकारिता का संकट केवल तकनीक या बाजार का संकट नहीं है—यह मूल्यों का संकट है। यदि मीडिया अपने नैतिक केंद्र को पुन: स्थापित कर ले, तो तकनीक भी उसके लिए वरदान बन सकती है। डिजिटल दुनिया में आवाज़ें अधिक हैं, पर सच्ची आवाज़ें वही होंगी जो ईमानदारी से निकलेंगी।

लेखन केवल अभिव्यक्ति नहीं—यह गवाही है। और गवाही वही मूल्य रखती है जो संदेह से परे हो, युधिष्ठिर की वाणी की तरह—निष्कलंक, साहसी और सत्य के प्रति अटूट। यही पथ भारतीय पत्रकारिता की खोई हुई आत्मा को वापस ला सकता है।

कभी पत्रकारिता राजनीतिक चरित्र निर्माण या परिवर्तन का सबसे सशक्त साधन मानी जाती थी। इतिहास में अनेक उदाहरण हैं, जब एक छोटी-सी खबर ने पूरे सत्ता-संतुलन को बदल दिया। बाबू जगजीवन राम को प्रधानमंत्री पद के लिए संभावित दावेदार माना जा रहा था, पर उनके पुत्र से जुड़े एक कांड का खुलासा होते ही राजनीतिक समीकरण बदल गए। एक अख़बार की एक रिपोर्ट ने देश की राजनीति को नई दिशा दे दी। इसके विपरीत आज ऐसी स्थिति बार-बार होती है कि बड़े नेता कैमरे पर आपत्तिजनक हालात में पकड़े जाते हैं, भ्रष्टाचार के दस्तावेज़ सामने आते हैं, निजी और सार्वजनिक जीवन में विरोधाभास उजागर होते हैं-फिर भी कोई ठोस कार्रवाई नहीं होती। वे चुनाव भी जीत जाते हैं, पद भी पा लेते हैं और मीडिया का एक हिस्सा उन्हें बचाने में जुट जाता है। यह केवल तकनीकी बदलाव नहीं, बल्कि जवाबदेही के ढहने का संकेत है। डिजिटल और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने इस समस्या को और जटिल बना दिया है। टीवी डिबेट्स में चीखते-चिल्लाते प्रवक्ता, सोशल मीडिया पर ट्रोल आर्मी, और 'पहले दिखाओ, बाद में जांच करो' की होड़-इन सबने पत्रकारिता की विश्वसनीयता को कमजोर किया है। डिजिटल मंचों पर कोई भी कुछ भी लिख या बोल सकता है और वह तुरंत लाखों लोगों तक पहुंच जाता है। सच और झूठ के बीच की दूरी कम हो गई है, लेकिन भ्रम और अविश्वास की खाई बढ़ गई है। ऐसे समय में लिखित शब्द की गंभीरता और मूल्य का पुनः स्मरण आवश्यक हो जाता है।

क्रिसमस त्योहार

ईसाइयों का त्योहार क्रिसमस पूरी दुनिया में करोड़ों लोगों द्वारा 25 दिसम्बर को ईसा के जन्म दिवस के रूप में मनाया जाता है। दुनिया का सबसे लोकप्रिय त्योहार प्रेम, मानवता और भाई-चारे के संदेश को याद दिलाने के लिए मनाया जाता है। ईसाइयों के लिए क्रिसमस का वही महत्त्व है जो दिवाली का हिन्दुओं और ईद का मुसलमानों के लिए। भारत में क्रिसमस को राष्ट्रीय अवकाश घोषित किया गया है।

इस त्योहार की तैयारियाँ दिसम्बर के दूसरे सप्ताह से ही प्रारम्भ हो जाती हैं। ईसाई धर्मावलम्बी अपने घरों की साफ-सफाई और सजावट प्रारम्भ करते हैं वैसे ही जैसे कोई हिन्दू परिवार दीपावली के पूर्व करता है। यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि देशों में शॉपिंग माल व बाजार सजने लगते हैं। अब तो भारत में भी क्रिसमस एक आम जनता का त्योहार बनता जा रहा है। न्यूयार्क का क्रिसमस ट्री दुनिया भर में प्रसिद्ध है। भारत में सैलानी गोवा का क्रिसमस देखने व छुट्टियों का आनन्द मनाने वहाँ जाते हैं।

क्रिसमस के पूर्व ईसाई समुदाय के लोग छोटी-छोटी टोलियाँ बनाकर 'केरोल' यानी प्रभु येसु के जन्म सम्बन्धी गीत गाते हैं। इस अवसर पर टोली में एक व्यक्ति सांता क्लाज बनकर आगे चलता है और बच्चों को मिठाइयाँ बाँटता है। प्रत्येक ईसाई परिवार अपने घर में क्रिसमस झाँकी बनाता है जो येसु के जन्म स्थल की याद दिलाती है।

अमूमन क्रिसमस के एक दिन पूर्व की संध्या को भक्तगण चर्च में जमा होकर प्रार्थना करते और भजन गाते हैं। ईसा के जन्म की गाथा पढ़ी जाती है उस पर मनन होता है। मध्यरात्रि को विशेष दिव्य पूजन के साथ यह भक्ति समाप्त होती है और लोग एक-दूसरे को क्रिसमस की बधाइयाँ देते हैं। केक बाँटा जाता है। क्रिसमस के दिन यानी 25 दिसम्बर को प्रात: पुन: पूजा-वंदना होती है। लोग बधाइयाँ और शुभ कामनाओं के साथ केक बाँटते हैं।

जोसेफ एन्टोनी गाथिया

पड़ोसियों व रिश्तेदारों के साथ जश्न मनाया जाता है। रात्रि को शानदार पार्टी की जाती है। दिन के समय गरीबों को वस्त्र व भोजन दान किया जाता है। गरीब से गरीब ईसाई भी इस अवसर पर कुछ न कुछ दान करता है। इस दान को गुप्त रखने की प्रथा भी है। इस दिन उपहार देना, क्रिसमस कार्ड भेजना, चर्च समारोह, विशेष भोज और सजावट का विशेष ध्यान रखा जाता है। इस दिन बच्चे बड़े खुश होते हैं क्योंकि ईसाई परिवारों में बच्चों के लिए विशेष गिफ्ट रखी जाती है और बच्चे उत्सुकता से इस घड़ी का इंतजार करते हैं। प्रत्येक परिवार यह सुनिश्चित करता है कि इस दिन आने वाला 'गेस्ट' केक व भोजन के बिना वापस न जाए। घर पर बने केक और व्यंजनों का मजा ही कुछ और होता है।

क्रिसमस और प्लम केक का अटूट रिश्ता : कभी आपने गौर किया कि क्रिसमस पर प्लम केक खाने-खिलाने और उपहार में देने का ही चलन क्यों है। दरअसल इसकी उत्पत्ति ही क्रिसमस के त्योहार से हुई है। प्लम केक क्रिसमस के उत्सव का एक पारंपरिक हिस्सा है और मध्ययुगीन काल से चला आ रहा है। इस केक का नुस्खा लोगों के इस दौरान रखे जाने वाले उपवास और उसके बाद होने वाली बड़ी दावत को देखते हुए सामने आया था। उन दिनों बड़ी मात्रा में सूखे मेवे और जई मसाले और शहद के साथ मिलाकर गाढ़ी और पेट भरने वाली मिठाई बनाई जाती थी। क्रिसमस के मौके पर लोगों ने पारंपरिक रूप से केक बनाया। इसे बनाने की की तैयारी क्रिसमस की छुट्टी से कम से कम एक महीने पहले शुरू हो जाती है। आमतौर पर इसे बनाने के लिए सूखे मेवे ब्रांडी में भिगोए जाते हैं। केक के बेक हो जाने के बाद इस भीगी हुई सामग्रियों को बैटर में मिलाया जाता है। परंपरागत तौर पर ये केक एक समृद्ध और स्वादिष्ट सुगंध लिए होता है। प्लम केक के स्वाद की तुलना अक्सर दालचीनी से की जाती है।

सांता क्लॉज : क्रिसमस के अवसर पर बच्चे सांता क्लॉज का बड़ी बेसब्री से इंतजार करते हैं। लोग सांता के हाथों उपहार लेना शुभ मानते हैं।

सांता क्लॉज पौराणिक इतिहासिक दृष्टि से लोक कथाओं में प्रचलित एक ऐसा उदार, दयालु व्यक्ति है जो क्रिसमस के अवसर पर बच्चों को खुश करने के लिए उपहार बाँटता है। ऐसा माना जाता है कि इसकी कल्पना निकोलस नामक संत के अनुरूप गढ़ी गयी है। जो क्रिसमस के अवसर पर गरीब बच्चों को गुपचुप उपहार देता था और बच्चे यह समझते थे कि उनके माता-पिता ने यह उपहार घर के क्रिसमस ट्री के पीछे छुपाकर रखा था। इस तरह धीरे-धीरे उत्तरी यूरोप में यह किंवदंती फैली और फिर पूरी दुनिया के ईसाइयों में।

आम तौर पर एक मोटे, गोलमटोल, हंसमुख, सफेद दाढ़ी वाले व्यक्ति के रूप में सांता की कल्पना की जाती है जो सफेद कालर वाला लाल रंग का लम्बा कोट पहनता है। उसके हाथ में एक लम्बी छड़ी होती है और वह रेनडियरों द्वारा खींचे जाने वाली बग्गी पर सवार होकर आता है। इस छवि को लोकप्रिय बनाने में 19वीं सदी के चित्रकार थॉमस नास्ट ने अहम भूमिका निभाई थी। उसके द्वारा सांता क्लॉज की तस्वीर ऐसी प्रसिद्ध हुई कि दुनिया भर में यही रूप छा गया।

आज का क्रिसमस एक सामाजिक त्योहार बन गया है। पिछले दशकों में भारत में क्रिसमस मनाने का दायरा काफी विस्तृत हो गया है। क्रिसमस का त्योहार 25 दिसम्बर से एक जनवरी तक खुशियाँ बिखेरता रहता है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

भगवान स्वामीनारायण : कलियुग में धर्म प्रतिष्ठा हेतु नर-नारायण का दिव्य अवतरण

भारतीय वैदिक परंपरा में यह श्रद्धा-विश्वास प्रतिष्ठित है कि जब-जब धरती पर अधर्म की वृद्धि होती है तथा धर्म-नीति का ह्रास होने लगता है, तब भगवान स्वयं अवतार धारण कर सत्य, अहिंसा और सदाचार की स्थापना करते हैं। इसी परंपरा के अनुरूप कलियुग में भगवान नर-नारायण देव ने अधर्म-नाश तथा धर्म-प्रवर्तनार्थ स्वामीनारायण रूप में अवतीर्ण होकर जगत को दिव्य बोध प्रदान किया। इस कारण स्वामी नारायण सिद्धांत में नर-नारायण देव की उपासना आज भी सर्वोच्च।

आचार्य कोशलेन्द्र प्रसाद जी महाराज
(वर्तमान आचार्य)

दिव्य अवतार और पुण्य जन्म : जब धर्मदेव एवं भक्ति माता-जो धर्म-स्वरूप तथा भक्ति-रूपा शक्ति के प्रतीक माने जाते हैं-दानवों के अत्याचार से पीड़ित हुए, तब भगवान श्रीहरि ने स्वयं कौशल-देश के छपईया ग्राम में उनके कुल में अवतार लिया। संवत् 1837, चैत्र शुक्ल नवमी (रामनवमी), तदनुसार 3 अप्रैल 1781, इसी पावन दिन सरयूपारीण ब्राह्मण कुल में धर्मदेव पांडेय एवं माता भक्ति देवी के गृह-आंगन में दिव्य बालक-घनश्याम-ने जन्म ग्रहण किया। यही घनश्याम आगे चलकर सहजानंद स्वामी तथा फिर भगवान स्वामीनारायण नाम से विख्यात हुए, जिन्होंने समस्त मुमुक्षुजनों को स्वरूपज्ञान, धर्म-वैराग्य तथा भक्ति का अक्षय मार्ग प्रदान किया।

'शिक्षापत्री'-सदाचार और शास्त्रीय ज्ञान का दिव्य सार : भगवान स्वामीनारायण द्वारा रचित शिक्षापत्री धर्म-नैतिकता, सामाजिक मर्यादा तथा वैदिक आचरण का अनूठा संहिता-ग्रंथ है। उन्होंने इसकी एक पावन प्रति तत्कालीन बंबई प्रांत के गवर्नर सर जॉन मेलकॉम को भेंट की। उनके आदर्श तथा लौकिक-परलोकिक दृष्टि से प्रभावित होकर ब्रिटिश शासन ने अहमदाबाद में मंदिर-निर्माण हेतु भूमि दान में प्रदान की। शिक्षापत्री की वह मूल प्रति आज भी ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, बोडलियन लाइब्रेरी (यूके) में पवित्रतापूर्वक संरक्षित है।

धर्मस्थापनार्थ भव्य मंदिर-निर्माण : भगवान स्वामीनारायण ने भारतभूमि पर धर्म की दृढ़ प्रतिष्ठा हेतु अनेक शिखरबद्ध एवं शास्त्रोक्त मंदिरों का निर्माण कराया-अहमदाबाद, वडताल, भूज, जेतलपुर, मूली, धोलका, गढ़डा, धोलेरा, जूनागढ़-ये सभी मंदिर धार्मिकता, करुणा, सेवा और सत्संग के दिव्य केन्द्र बने।

सम्प्रदाय की रक्षा हेतु द्वि-आचार्य व्यवस्था : भगवान स्वामीनारायण को संतान नहीं थी, अत: उन्होंने सम्प्रदाय की अखंडता एवं धर्म-परंपरा की शुचिता के लिए अपने ही कुल से अपने बड़े भाई श्री रामप्रताप पांडेय के पुत्र को दत्तक लेकर दो आचार्य पीठों की स्थापना की, नर-नारायण देव गादी-श्रीधरमपुर (अहमदाबाद पीठ) प्रथम आचार्य श्री अयोध्याप्रसादजी महाराज। लक्ष्मी-नारायण देव गादी - वडताल पीठ, प्रथम आचार्य श्री रघुवीर प्रसाद जी महाराज। दोनों पीठें आज भी स्वयं को श्रीजी महाराज की दासता में समर्पित कर सम्प्रदाय की पवित्र मर्यादाओं का पालन करती हैं।

आचार्य वंशावली का पावन प्रवाह : अयोध्या प्रसाद जी, केशव प्रसाद जी, पुरुषोत्तम महाराज, वासुदेव प्रसाद जी (वासुदेव प्रसाद जी-भगवान स्वामी नारायण के बड़े भ्राता श्री रामप्रताप पांडेय की कुल परंपरा से)।

आचार्य श्री देवेंद्रप्रसादजी महाराज : जन्म : शरदपूर्णिमा (पूर्णचंद्र अवतार) उनका पाणिग्रहण संस्कार काशी के महंत परंपरा के पीठाधीश्वर पंडित महावीर प्रसाद की विदुषी पुत्री शारदा देवी के साथ सम्पन्न हुआ। उनके संयोग से उत्पन्न तेजस्वी पुत्ररत्न-आचार्य परमपूज्य 1008 श्री तेजेन्द्र प्रसाद जी महाराज। दीक्षा : 13 अक्टूबर 1969, नर-नारायण देव पीठ, अहमदाबाद। इनके कुशल, करुणामय एवं तपोमय नेतृत्व में स्वामीनारायण सम्प्रदाय का अद्वितीय विस्तार हुआ।

वर्तमान पीठाधीश्वर : आचार्य श्री कोशलेन्द्र प्रसाद जी महाराज (सातवें उत्तराधिकारी, 2004 वर्तमान)। आचार्य तेजेन्द्र प्रसाद जी के सुपुत्र रूप में वे आज नर-नारायण देव गादी के वर्तमान पीठाधीश्वर हैं तथा स्वामीनारायण भगवान के सिद्धांत, सेवा और सत्संग को आधुनिक संसार में दिव्य गौरव के साथ प्रतिष्ठित कर रहे हैं।

भगवान स्वामीनारायण का अवतरण धर्म, सेवा, करुणा, नीति और अध्यात्म की पुनर्स्थापना का अनूठा दिव्य अध्याय है। उनकी शिक्षाएँ, उनका सत्संग-मार्ग, उनके आचार्यों की परंपरा तथा उनके द्वारा स्थापित मंदिर-सभी आज भी सनातन संस्कृति के उज्ज्वल ध्वज-वाहक के रूप में विश्व को सत्य, प्रेम और सदाचार का पथ दिखा रहे हैं।

■■■■

महंत काशी विश्वनाथ मंदिर के साथ प्रबंध संपादक चंद्र कुमार द्वारा विशेष साक्षात्कार

पं. लोकपति त्रिपाठी जी
पू. महंत, काशी विश्वनाथ मंदिर, काशी

आप एवं आप के पूर्वज काशी विश्वनाथ मंदिर, काशी के पू. महंत के गद्दी पर विराजमान रहे हैं, अब सुनते हैं जब से मंदिर का सरकारीकरण हुआ है मंदिर में पंडित पुजारी, पंडा समाज का प्रवेश वर्जित हो गया है?

विल्कुल सही कहा आप ने अब उस तरह का माहौल नहीं है।

आप के परिवार का स्वामी नारायण सम्प्रदाय से क्या संबंध है?

दरअसल स्वामी नारायण सम्पदाय के पूज्य आचार्य तेजेन्द्र प्रसाद जी हमारी पूज्यनीय बुआ जी श्रीमती शारदा देवी जी एवं फूफा जी पूज्य आचार्य देवेन्द्र प्रसाद जी के सुपुत्र हैं जो हमारे पूज्य बड़े भ्राताश्री हैं और उनके सुपुत्र आचार्य कोशलेन्द्र प्रसाद जी महाराज वर्तमान में गद्दी के पीठाधीश्वर हैं।

आप स्वामी नारायण सम्प्रदाय के बारे में क्या जानते हैं?

सब कुछ अच्छी तरह से जानते हैं।

भगवान स्वामीनारायण का जन्म कब और कहाँ हुआ?

भगवान स्वामी नारायण जी का जन्म सन् 1781 (संवत 1837) की चैत्र शुक्ल नवमी को अयोध्या के समीप छपिया गांव में धर्मदेव पांडेय और भक्ति देवी के घर हुआ। सम्प्रदाय की मान्यता के अनुसार यह नर-नारायण का अवतार था, जो धर्म और भक्ति माता की रक्षा तथा अधर्म के अंत के लिए पृथ्वी पर प्रकट हुए।

बाल्यकाल में स्वामीनारायण भगवान किन विशेषताओं के लिए पहचाने गए?

बचपन से ही उनके भीतर अद्भुत ज्ञान, गहन तप, तेजस्विता और करुणा दिखाई देती थी। नीलकंठ वरिणी (यानी बालक घनश्याम/नरोत्तम) के रूप में उन्होंने वर्षों पैदल यात्रा की व लोककल्याण का मार्ग प्रशस्त किया।

'एकान्तिक धर्म' क्या है और इसकी स्थापना का उद्देश्य क्या था?

'एकान्तिक धर्म' स्वामीनारायण भगवान द्वारा प्रतिपादित एक समन्वित आध्यात्मिक मार्ग है, जिसके चार स्तंभ-धर्म, ज्ञान, वैराग्य और भक्ति हैं। इसका उद्देश्य मनुष्य को संयमित, नैतिक, भक्त, ज्ञानी और ईमानदार बनाना है।

क्या स्वामीनारायण भगवान केवल अध्यात्म तक सीमित रहे?

बिल्कुल नहीं। वे एक महान समाज-सुधारक भी थे। उन्होंने धार्मिक शिक्षाओं को सामाजिक सुधारों के साथ जोड़ा और कई गहरी जड़ें जमाए कुप्रथाओं पर निर्णायक प्रहार किया।

स्वामीनारायण भगवान के प्रमुख सामाजिक सुधार कौन-कौन से हैं?

- सती प्रथा का मुखर विरोध
- कन्या भ्रूण हत्या/बालिका हत्या पर प्रतिबंध
- महिलाओं की शिक्षा व धार्मिक संवाद में भागीदारी।
- यज्ञों में पशुबलि बंद करवाना
- वर्ण-जाति आधारित भेदभाव हटाने की पहल
- सभी वर्गों से भिक्षा स्वीकार करने की परंपरा
- उनका स्पष्ट संदेश था- 'भगवान की दृष्टि में जीव न पुरुष है, न स्त्री; सभी समान हैं।'

मानव सेवा के क्षेत्र में उनका योगदान क्या रहा?

अकाल, सूखा और कठिन परिस्थितियों में उन्होंने भोजन, पानी, आश्रय और राहत की विशाल व्यवस्था की। उन्होंने अन्नछत्र, दानगृह और सेवा केन्द्र स्थापित किए, जिसकी परंपरा आज भी संप्रदाय की पहचान है।

क्या उन्होंने स्वयं शास्त्र-लेखन किया?

हाँ। उनकी शिक्षापत्री एक अत्यंत महत्वपूर्ण व सरल उपदेश-ग्रंथ है, जिसमें नैतिकता, व्यवहार, धर्म और जीवन के मूल सिद्धांत स्पष्ट किए गए हैं।

- इसके अलावा उन्होंने प्राचीन शास्त्रों की प्रमाणिकता पुन: स्थापित की और अपने साधुओं को गहन अध्ययन व प्रचार-प्रसार के लिए प्रेरित किया।
- ब्रिटिश गवर्नर सर जॉन मेल्कम को भेंट की गई 'शिक्षापत्री' आज भी ऑक्सफोर्ड की बोडलियन लाइब्रेरी में सुरक्षित है।

मंदिर-निर्माण में उनका योगदान क्या है?

उन्होंने गुजरात के अनेक नगरों-अहमदाबाद, वडताल, जेतलपुर, गढ़ड़ा, मूली, भूज, धोलेरा, धोलका और जूनागढ़ में भव्य शिखरबद्ध मंदिर स्थापित किए। ये भारतीय शिल्प, कला और अध्यात्म का दुर्लभ संगम हैं।

आचार्य परंपरा की स्थापना क्यों और कैसे हुई?

संप्रदाय को संगठित और स्थायी रूप देने के लिए उन्होंने दो गादियों की स्थापना की-

- नर-नारायण देव गादी (अहमदाबाद)
- लक्ष्मी-नारायण देव गादी (वडताल)
- विक्रम संवत 1882 की प्रभोधिनी एकादशी को उन्होंने अपने भतीजों अयोध्याप्रसादजी और रघुवीरप्रसादजी को क्रमश: इन गादियों का आचार्य नियुक्त किया। यह नेतृत्व आज भी परंपरा और मर्यादा के साथ चल रहा है।

आचार्य परंपरा कैसे विकसित होती गई?

अयोध्या प्रसाद जी से लेकर केशव प्रसाद जी, पुरुषोत्तम महाराज, वासुदेव प्रसाद जी, देवेंद्र प्रसाद जी सभी ने संप्रदाय के विस्तार, शिक्षा, सेवा और संगठन को नई ऊँचाइयाँ दीं। आचार्य तेजेंद्र प्रसाद जी महाराज ने वैश्विक स्तर पर संप्रदाय को उन्नत किया, जबकि वर्तमान में आचार्य कौशलेन्द्र प्रसाद जी महाराज नर-नारायण देव गादी के पीठाधीश्वर हैं।

आज का स्वामीनारायण संप्रदाय किस रूप में सक्रिय है?

आज संप्रदाय देश-विदेश में आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, मानवीय और शैक्षिक कार्यों में अग्रणी है। मंदिर, विद्यालय, चिकित्सा सेवाएँ, आपदा राहत, संस्कार-शिक्षा और मानव-कल्याण इसके प्रमुख आयाम हैं।

उनकी शिक्षाओं की आज के समय में प्रासंगिकता क्या है?

सत्य, संयम, सेवा, समर्पण और निष्काम भक्ति-ये मूल्य हर युग के लिए मार्गदर्शक हैं। आधुनिक जीवन की चुनौतियों में उनके उपदेश एक स्थिर प्रकाशस्तंभ की तरह दिशा देते हैं।

संक्षेप में स्वामीनारायण भगवान का जीवन हमें क्या सिखाता है?

उनका जीवन यह सिखाता है कि-

- अध्यात्म समाज-सुधार से अलग नहीं
- सेवा ही सच्ची पूजा है
- नैतिकता धर्म की आधारशिला है
- परंपरा और आधुनिकता का संतुलन ही उदात्त मार्ग है। दिसम्बर अंक का यह धर्म-दर्शन उनके विराट और कालातीत योगदान को विनम्र श्रद्धांजलि है। ■■

लगातार प्रदर्शन और कठिन निर्णयों की बात

जिस समय भारतीय लड़कियों ने दिग्गज टीमों को पछाड़ते हुए एकदिवसीय विश्व कप अपने नाम किया-यह ऐतिहासिक और प्रथम विजय थी-एक नाम अचानक सुर्खियों में आ गया- टीम के कोच अमोल मजूमदार, और यह पूरी तरह न्यायसंगत भी था। उनका क्रिकेट करियर भी चर्चा में आया-171 प्रथम श्रेणी मैच, 11,00 से अधिक रन, 48 से अधिक का औसत, 30 शतक और 60 अर्धशतक। लेकिन भारत के लिए एक भी टेस्ट मैच नहीं। कारण? उन्होंने क्रिकेट उस दौर में खेला जब तेंदुलकर, द्रविड़ और लक्ष्मण जैसे दिग्गज भारतीय मध्य क्रम पर मजबूत पकड़ बनाए हुए थे-जिससे अन्य प्रतिभावान बल्लेबाज़ों के लिए जगह ही नहीं बचती थी।

अमोल ऐसे पहले खिलाड़ी नहीं हैं। घरेलू क्रिकेट में शानदार प्रदर्शन करने वालों की लंबी सूची है, जिन्हें टेस्ट क्रिकेट का मौका नहीं मिला या बेहद कम मिला। बिशन सिंह बेदी के दौर में पद्माकर शिवालकर और राजिंदर गोयल जैसे कई बाएं हाथ के स्पिनर नजरअंदाज़ हुए, फ़ारुख इंजीनियर ने अन्य विकेटकीपरों के लिए रास्ता बंद कर दिया। रमेश सक्सेना बिहार के लिए लगातार रन बनाते रहे, लेकिन उन्हें टीम में शायद ही कोई मौका मिला। हाल के वर्षों में धोनी की सफलता ने दिनेश कार्तिक और ऋद्धिमान साहा जैसे विकेटकीपरों के अवसर सीमित कर दिए। इन खिलाड़ियों की दुविधा समझी जा सकती है, पर चयनकर्ताओं ने उस समय स्पष्ट सोच दिखाई और अपने फैसलों पर टिके रहे।

जो आज दिखाई नहीं देता : भारतीय चयनकर्ताओं को बहुत दूर देखने की ज़रूरत नहीं है। वे ऑस्ट्रेलियाई चयनकर्ताओं से सीख सकते हैं, जिनके पास कमिंस, स्टार्क और हेज़लवुड जैसी निश्चित तेज गेंदबाजी तिकड़ी है। इनमें से कोई फिट न हो तो स्कॉट बोलैंड को बुला लिया जाता है। लेकिन जैसे ही मूल गेंदबाज़ फिट हो जाता है, वह टीम में वापस आ जाता है—चाहे बोलैंड ने कितनी भी शानदार गेंदबाज़ी क्यों न की हो। यह स्पष्ट

अनिल जौहरी

और दृढ़ सोच का उदाहरण है और कठिन निर्णय लेने का भी। भारत आज शायद पहले कभी न देखी गई प्रतिभा-संपन्नता से जूझ रहा है, खासकर व्हाइट बॉल क्रिकेट में। चयनकर्ताओं का काम पहले से कहीं ज़्यादा कठिन है-लेकिन उतना ही अधिक भुगतान भी उन्हें मिलता है! लेकिन क्या वे उतनी ही स्पष्टता और निरंतरता दिखा रहे हैं? आइए केवल टेस्ट टीम का आकलन करें, क्योंकि हम अभी-अभी एक और घरेलू हार का सामना कर चुके हैं।

बल्लेबाजी क्रम और असमंजस : यशस्वी जायसवाल और केएल राहुल ओपनर के रूप में स्थापित हैं। इसका अर्थ है कि केवल बैकअप ओपनर का स्लॉट खुला है। 2024-25 में एश्वरन को ऑस्ट्रेलिया ले जाया गया, फिर 2025 की गर्मियों में इंग्लैंड और अब उन्हें बाहर कर दिया गया। नंबर 3 की जगह शुभमन गिल के पास मजबूत रूप से थी-वह वहाँ 40 से ऊपर के औसत से खेल रहे थे-लेकिन इंग्लैंड दौरे पर कप्तान बनते ही उन्होंने ineplicably खुद को नंबर 4 पर भेज दिया, जिससे बल्लेबाज़ी क्रम को असुरक्षित बना दिया। ऐसा लग रहा था कि साई सुदर्शन इस नए स्थान पर जम रहे हैं, लेकिन उन्हें अचानक हटा दिया गया और उनकी जगह वॉशिंगटन सुंदर को डाल दिया गया।

इंग्लैंड दौरे में चयनकर्ताओं ने विशेषज्ञ गेंदबाज़ों के बजाय ऑलराउंडर्स को तरजीह दी और कुलदीप यादव को लगातार बाहर रखा। अब लगता है कि वे विशेषज्ञ बल्लेबाजों की जगह भी ऑलराउंडर्स को खिलाना चाहते हैं। पांचवें बल्लेबाज की जगह भी खुली हुई है-करुण नायर को इंग्लैंड के अंतिम टेस्ट में कठिन परिस्थितियों में अर्धशतक लगाने के बाद भी निरंतर मौका नहीं मिला। इसके विपरीत, साई सुदर्शन और पडिक्कल जैसे विशेषज्ञ बल्लेबाज़ टीम में रहते हुए भी नजरअंदाज़ कर दिए गए और विकेटकीपर जुरेल को यह स्लॉट दे दिया गया-सिर्फ इसलिए कि उन्होंने हाल में अच्छी बल्लेबाजी की। जबकि कठिन निर्णय यह होता कि एक बार पंत वापस आ गए, तो जुरेल के लिए जगह नहीं बचती। और सरफराज खान का क्या-उन्होंने छह टेस्ट में एक शतक और तीन अर्धशतक लगाए और फिर भी टीम से बाहर हैं। रुतुराज गायकवाड़ और हनुमा विहारी जैसे खिलाड़ी घरेलू क्रिकेट में अच्छा कर रहे हैं और मध्यम क्रम में दावेदार हो सकते हैं।

विकेटकीपिंग-क्या संदेश स्पष्ट है : क्या पंत हमारी पहली पसंद हैं? हाँ। क्या जुरेल बैकअप हैं? हाँ। तो संदेश स्पष्ट होना चाहिए कि संजू सैमसन, ईशान किशन या जितेश शर्मा जैसे अन्य कीपरों के लिए टेस्ट टीम में जगह नहीं है।

तेज गेंदबाजी : चयन में उलझन : जसप्रीत बुमराह निश्चित हैं-जब तक Workload Management न लागू हो। शमी को उनके प्रदर्शन के आधार पर नियमित रूप से बुमराह का साथी होना चाहिए था, लेकिन फिट होने के बाद भी उन्हें अनदेखा किया जा रहा है। तीसरे तेज गेंदबाज़ के रूप में अब सिराज स्थापित हैं। घरेलू परिस्थितियों में भारत आमतौर पर दो से अधिक तेज गेंदबाज नहीं खिलाता। ऐसे में चयनकर्ताओं को अपने शीर्ष दो और तीसरे विकल्प के बारे में स्पष्ट होना चाहिए लेकिन वे नहीं हैं। टूर के लिए बैकअप सीमर चुनने में भी चयनकर्ताओं की सोच असंगत है-कभी प्रसिध, कभी हर्षित, कभी आकाशदीप, तो कभी अर्शदीप को चुन लेते हैं और फिर छोड़ देते हैं।

स्पिन विभाग-वही पुरानी उलझन : कई वर्षों तक जडेजा और अश्विन मुख्य स्पिन जोड़ी रहे। विदेशों में सिर्फ एक की जरूरत होने पर जडेजा को प्राथमिकता दी जाती थी। घरेलू परिस्थितियों में तीन स्पिनर भी खेल सकते थे और तीसरा कुलदीप होना चाहिए था लेकिन ऐसा नहीं हुआ। **(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)**

आरएसएस प्रमुख का बड़ा इमेज-बिल्डिंग अभियान

बेंगलुरु में हाल ही में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) प्रमुख मोहन भागवत का भाषण 'सौ वर्ष की संघ यात्रा : नए क्षितिज' गंभीर विवेचना का विषय है। यह व्याख्यान संघ की शताब्दी यात्रा के मूल्यांकन के रूप में प्रस्तुत किया गया, परंतु वस्तुत: यह संघ की घटती विश्वसनीयता को बचाने का एक बड़ा जनसंपर्क और छवि-निर्माण अभियान प्रतीत हुआ। दशकों से आरएसएस स्वयं को राष्ट्र का नैतिक और सांस्कृतिक दिशा-सूचक बताता रहा है। किंतु भागवत का भाषण आधे-अधूरे सच, चयनात्मक स्मृति-लोप और ऊँचे दावों से भरा था, जिनका यथार्थ से मेल कम ही दिखा। उनका यह कहना कि 'भारत में कोई अहिंदू नहीं है' और 'सभी- हिंदू, मुस्लिम, ईसाई-एक ही पूर्वज और संस्कृति के वंशज हैं,' सुनने में भले ही आकर्षक लगा, पर यह बात खोखली प्रतीत हुई। इस तरह का भाषण चाहे कितना भी सुगठित क्यों न हो, वह संघ की उस विभाजनकारी राजनीति को ढक नहीं सकता जो उसके वैचारिक विस्तार-भाजपा-के माध्यम से समाज में फैल चुकी है।

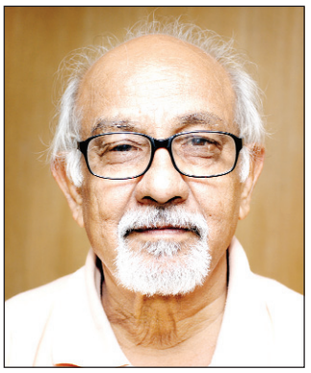

डॉ. सतीश मिश्र

वास्तविकता पर परदा : जब भागवत ने कहा कि 'गैर-हिंदू शायद यह नहीं जानते या उन्हें भुला दिया गया है' कि वे भी इसी परंपरा के अंग हैं, तो उन्होंने दोष दूसरों पर डाल दिया। उनका यह कहना कि 'सचेत या अचेत रूप से, सभी भारतीय संस्कृति का ही पालन करते हैं,' संघ की उस छवि को सुधारने का प्रयास था जो वर्षों की नफरत फैलाने वाली राजनीति, मॉब लिंचिंग, 'लव जिहाद' अभियानों और भाजपा शासित राज्यों के धर्मांतरण-विरोधी कानूनों के कारण निर्मित हुई है। उनका यह आग्रह कि 'हर हिंदू को समझना चाहिए कि वह हिंदू है, क्योंकि हिंदू होना भारत के प्रति जिम्मेदार होना है,' हिंदू पहचान को राष्ट्रवाद के साथ जोड़ने की पुरानी संघीय रणनीति को दोहराता है। परंतु शब्दों और कर्मों के बीच का विरोधाभास स्पष्ट है। शाखाओं में दिया जाने वाला रोज़ का प्रशिक्षण अल्पसंख्यकों को संदेह और विरोध की दृष्टि से देखने की प्रवृत्ति को ही पोषित करता है।

चयनात्मक इतिहास और सुविधाजनक विस्मृति : भागवत का यह दावा कि 'ब्रिटिशों ने हमें राष्ट्र नहीं दिया' और भारत की 'मूल संस्कृति हिंदू है', ऐतिहासिक तथ्यों से मेल नहीं खाता। 'हिंदू' शब्द स्वयं विदेशी यात्रियों द्वारा सिंधु नदी के पार रहने वाले लोगों के लिए प्रयुक्त हुआ था। भारत की वास्तविक आध्यात्मिक आत्मा सनातन है, न कि 'हिंदुत्व'-जो समावेशन नहीं, बल्कि बहिष्करण का राजनीतिक औज़ार है। इतना ही नहीं, भागवत का यह कहना कि 'हिंदू राष्ट्र' संविधान के अनुरूप है और 'सनातन धर्म ही हिंदू राष्ट्र है,' भी भ्रामक है। वे यह भूल गए कि संघ ने आरंभिक वर्षों में संविधान का विरोध किया था और 1970 के दशक तक अपने कार्यालयों पर राष्ट्रीय ध्वज फहराने से भी इंकार किया। केवल तब, जब सरकार ने कानूनी कार्रवाई की चेतावनी दी, संगठन ने सार्वजनिक रूप से संविधान-निष्ठा का दावा किया।

राजनीति से असंबद्धता का दावा : भागवत ने कहा कि आरएसएस 'नीतियों का समर्थन करता है, राजनीति का नहीं,' और भाजपा से किसी प्रकार का नियंत्रण न होने की बात कही। किंतु यह सर्वविदित है कि संघ के वरिष्ठ कार्यकर्ता सरकार के नियुक्तियों, तबादलों और उम्मीदवार चयन तक में प्रभाव डालते हैं। भाजपा के लगभग हर बड़े निर्णय- चाहे वह मंत्रिमंडल पुनर्गठन हो या राज्य नेतृत्व का चयन- में संघ की भूमिका स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। उन्होंने यह भी कहा कि राम मंदिर मुद्दे पर संघ ने भाजपा का समर्थन 'नीति के अनुरूपता' के कारण किया, न कि राजनीतिक निष्ठा से। यहां तक कहा कि 'यदि कांग्रेस ने समर्थन किया होता तो हमारे स्वयंसेवक उसके लिए भी मतदान करते।' यह कथन उस संगठन की दोहरी नीति को ही पुष्ट करता है जो परदे के पीछे से राजनीति नियंत्रित करता है पर सार्वजनिक रूप से स्वयं को निष्पक्ष बताता है।

दिखावटी समावेशन : जब उनसे पूछा गया कि क्या मुसलमान या ईसाई संघ में शामिल हो सकते हैं, तो उनका उत्तर था- 'कोई भी जाति या मजहब से बाहर नहीं रखा गया है, बशर्ते वे अपनी अलग पहचान को बाहर छोड़ दें।' यह सशर्त समावेशन संघ की मूल समस्या को उजागर करता है- भारत की बहुलतावादी पहचान को स्वीकार न कर पाने की अक्षमता। भागवत की शब्दावली में 'सहनशीलता' का अर्थ है- 'हिंदू सांस्कृतिक ढांचे के अनुरूप बनो।'

उनका यह कहना कि 'हम किसी से नहीं पूछते कि वे कौन हैं,' संघ के अल्पसंख्यक-विरोधी अभियानों की पृष्ठभूमि में खोखला लगता है। ऐसी बयानबाज़ी दशकों से चले आ रहे सांप्रदायिक ध्रुवीकरण और हिंसा के दाग को नहीं मिटा सकती, जिन्हें 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' के नाम पर वैध ठहराया गया।

जवाबदेही से ऊपर संगठन : भागवत ने आलोचकों को यह भी याद दिलाया कि आरएसएस कोई पंजीकृत संस्था नहीं है, बल्कि 'व्यक्तियों का समूह' है जिसे कानून ने मान्यता दी है। उन्होंने कहा, 'अगर हम नहीं होते, तो सरकार ने किसे प्रतिबंधित किया था?' पर वे यह नहीं बोले कि पंजीकरण न होने से संगठन सार्वजनिक वित्तीय लेखा-परीक्षा से बच जाता है। विडंबना यह है कि जहाँ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने आरएसएस को 'दुनिया का सबसे बड़ा एनजीओ' बताया, वहीं भागवत कहते हैं कि इसे किसी पंजीकरण की आवश्यकता नहीं- यह विरोधाभास अब तक अनुत्तरित है।

(डॉ. सतीश मिश्रा वरिष्ठ पत्रकार और अनुभवी राजनीतिक विश्लेषक हैं)

हास्य-व्यंग्य

अनेकता में एकता का सूत्रधारक

प्रो. प्रदीप माथुर

मैं प्रेस क्लब में एक मित्र के साथ बैठा चाय पी रहा था। वेटर एक आगंतुक को लेकर हॉल में आया और मेरी तरफ इशारा करके चला गया। वह सज्जन मेरे पास आए और नमस्कार करके बोले 'आप प्रदीप माथुर जी हैं।' 'हाँ कहिये', मैंने कहा। 'मैं आस्ट्रेलिया से आया हूँ। सिडनी में रहता हूँ। आपके चाचा जी ने आपका रिफरेंस दिया है', बैठते हुए वह बोले। मैंने ऊपर से नीचे तक उनको देखा। कुछ सड़क छाप लग रहे थे। फिर मैं याद करने की कोशिश कर रहा था कि मेरे कौन से चाचा सिडनी में रहते हैं। याद न आने पर मैंने पूछा वह किसकी बात कर रहे हैं।

'रामचन्दर सिंह जी की। वह कह रहे थे जब बहुत पहले वह इंडिया में थे तब आपके घर आते-जाते रहते थे और आप तब बहुत छोटे थे और उनको चाचा जी कहते थे', वह बोले। मुझे बचपन के दिन याद आये। जब पापा कानपुर में पोस्टेड थे तब उनके ऑफिस का चपरासी घर आता था और मां के कहने पर वह मुझे स्कूल छोड़ने जाता था। रामचन्दर बहुत महत्वाकांक्षी था और सुना था कि कोई जुगाड़ करके वह विदेश चला गया था।

'हाँ... हाँ, बताइये चाचा जी ने क्या कहा है', मैंने पूछा।

रामचन्दर जी मेरे पड़ोस में रहते हैं और हमारा परिवार अक्सर उनसे मिलता रहता हैं तथा साथ-साथ खानपान भी होता रहता है। एक दिन नाश्ते पर चर्चा होने लगी तो वह बोले कि सबसे अच्छे पकौड़े उन्होंने दिल्ली के प्रेस क्लब में खाये थे। दिल्ली में मुझे 15-20 दिन रुकना है तो सोचा शाम को यहीं आया-जाया करूंगा। आपसे बातचीत भी होती रहेगी और बढ़िया पकौड़े भी खाने को मिलते रहेंगे', वह चेहरे पर सस्ती सी मुस्कान लेकर बोले।

मेरे तन-बदन में आग लग गई। अभी तक तो नासमझ लोग प्रेस क्लब को दारू का अड्डा समझ कर बदनाम करते थे, अब यह सज्जन उसको पकौड़े का ठेला बनाने जा रहे हैं। 'हाँ... हाँ क्यों नहीं आप जरूर आइये, पर एक बात है...।' उन्होंने मुझे बीच में ही टोका और बोले पकौड़े का भुगतान मैं ही करुंगा, आप फिक्र न करें। 'अगर जवानी के जोशीले दिन होते तो मैं उन्हें डांटकर भगा देता। लेकिन इस उम्र में दुनिया देखते-देखते बेवकूफी सहने की आदत सी बन गई है', मैंने शांत स्वर में कहा।

'पकौड़े के पैसे देने की बात नहीं है। वह तो वैसे भी छोटी सी बात है और आप तो आस्ट्रेलियाई नागरिक हैं इसलिए हमारे देश के मेहमान हैं। बात यह है कि प्रेस क्लब के पकौड़े स्वादिष्ट तो है ही लेकिन इसके साथ-साथ पकौड़े का देश के सामाजिक और राजनैतिक जीवन में भी बहुत महत्व है। उसे समझ कर ही आप उसका पूरा आनंद उठा पायेंगे', मैंने कहा।

वह कुछ असंतुष्ट से लगे। मैंने वेटर को इशारा किया और उसे मिक्सड पकौड़े की प्लेट और चाय लाने को कहा। गर्दन घुमाकर देखा तो मेरे मित्र मुझे हैरतअंगेज नजरों से देख रहे थे। मैंने उन सज्जन से कहा कि जब तक ताजे गरमा-गरम पकौड़े आये तब तक मैं आपको यहां के पकौड़े का महत्व समझाता हूँ। देखिये दिल्ली राजधानी है और यहां देश के हर राज्यों के मीडिया वाले रहते हैं। प्रेस क्लब इन सबके मिलने का एक बढ़िया स्थान है। इसलिए यहां विभिन्न भाषाओं, संस्कृतियों और विचार वाले लोग आते हैं और साथ-साथ खाते-पीते हैं। यहां पकौड़े सबको एकता के सूत्र में बांधने का काम करते हैं। अत: प्रेस क्लब के पकौड़े अनेकता में एकता के संदेश के वाहक हैं।

शायद उनके मुंह से हल्की सी जी की ध्वनि निकली, मैंने अपना प्रवचन जारी रखा। और देखिये जैसे हमारे देश में विभिन्न धर्मों के लोग रहते हैं इसी तरह प्रेस क्लब में विभिन्न प्रकार के पकौड़े बनते हैं जैसे पनीर पकौड़ा, लच्छा पकौड़ा और कचूमर पकौड़ा। साथ ही साथ यहां मिक्सड पकौड़ा भी बनता है जो हमारे आपसी भाईचारे और सर्वधर्मसम्भाव का प्रतीक है। उनके चेहरे से लग रहा था कि पकौड़े की प्रतीक्षा उन्हें कुछ भारी पड़ रही है।

मैंने कहा कि यहां विभिन्न राजनैतिक विचारधाराओं वाले पत्रकार और बुद्धिजीवी लोग आते हैं। कुछ अपनी सोच में दक्षिणपंथी है और समाजवादी अर्थव्यवस्था के घनघोर विरोधी हैं। तो दूसरी तरफ वामपंथी हैं जो पूंजीवादी व्यवस्था तथा निजीकरण के विरुद्ध लामबंद रहते हैं। लेकिन सभी यहां मिलकर शांतिपूर्ण ढ़ग से पकौड़े खाते हैं। इससे आपको हमारे प्रजातांत्रिक मूल्यों पर गर्व होगा और उनमें आपकी आस्था और गहरी होती जाएगी। वेटर ने पकौड़े की प्लेट और चाय की केतली मेज पर लाकर रख दी। वह प्याले में चाय डालने ही वाला था कि मैंने उससे कहा यह हमारे सम्माननीय विदेशी मेहमान हैं। मैं खुद अपने हाथ से इनके लिए चाय बनाऊंगा। यही हमारी परम्परा है।

मेरे मित्र के लिए इस बात पर अपनी हंसी छिपाना भारी पड़ रहा था। मैंने चाय का कप उनकी तरफ बढ़ाते हुए कहा- शायद आपको पता नहीं होगा कि पिछले दिनों पकौड़े को भारत में राष्ट्रीय पहचान मिल गई है। सरकार ने बेरोजगार युवकों को पकौड़े बनाने और बेचने की सलाह दी है। इससे सर्वत्र एक नए उत्साह का संचार हुआ है। बेरोजगारी को कम करने का यह कारगर उपाय भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए एक मील का पत्थर साबित हो सकता है। इससे विकास के नए आयाम खुलेंगे और देश में खुशहाली व अच्छे दिन आयेंगे।

उन्होंने दो बड़े घूंट लेकर चाय समाप्त की और बोले 'अच्छा चलूं... किसी को मिलने का टाइम दिया है।' 'आपसे मिलकर बहुत अच्छा लगा। आते रहिएगा मैं रोज शाम यहां आता हूँ।' मैंने विदा करते हुए कहा। 'देखिये कोशिश करूंगा। दिल्ली में बहुत काम है और मेरा स्टे जरा शार्ट है,' वह बोले और बाहर चले गए। मेरे मित्र भी उठे और बोले जरा एक मिनट मैं वॉशरुम होकर आता हूँ एक और प्याला चाय के लिए वेटर को बोल दो जरा।

■■ (यह रचना लेखक के व्यंग्य संग्रह 'तोला माशा मिशा' से ली गई है, जो प्रकाशनाधीन है)

RNI NO. : UPHIN/2016/68336

See Media Map Website

Website link: www.mediamap.co.in

View Media Map YouTube

Media Map News

जनसंवाद 7 : खानपान पर रोक क्यों? Ep- 124

3 views • 4 hours ago

जन संवाद 6 : नेहा हो या कुणाल, व्यंग्य से क्यों डरना? Ep- 123

4 views • 4 hours ago

विविधा 15 : जज को भी छह महीनों की सजा : Ep- 122

27 views • 21 hours ago

विविधा- 14 : कंपनी की तानाशाही - आपके प्रोडक्ट को ख़राब कर रहें हैं। Ep- 121

6 views • 23 hours ago

आर्थिक सहयोग की अपील

उदार लोकतंत्र और गैर-सांप्रदायिक विश्वास के दर्शन से जुड़ा, मीडियामैप समाचार नेटवर्क एक गैर-व्यावसायिक संगठन है। हम आप जैसे गंभीर और समझदार पाठकों को संबोधित करना चाहते हैं। वरिष्ठ मीडियाकर्मियों के समूह द्वारा किया गया यह एक स्वैच्छिक प्रयास है, जिसका किसी राजनीतिक, सामाजिक या व्यावसायिक समूह से कोई संबंध नहीं है। मीडिया मैप के प्रकाशन को निरंतर व सुचारु रूप से जारी रखने हेतु आपका सहयोग आवश्यक है।

- ***State Bank of India***
- ***Account No. 43812481024***
- ***IFSC # SBIN0005226***
- ***प्रस्तुत QR कोड को स्कैन करें।***

प्रकाशक
MBKM Foundation, एक पंजीकृत गैर-लाभकारी संगठन

पंजीकृत कार्यालय
फ्लैट नंबर: 2332, सेक्टर-डी, पॉकेट-2, वसंत कुंज, दक्षिण दिल्ली

RNI No. : UPHIN/2016/68336

Please Stay with us and Explore the Beauty of the Surrounding Areas

Scholars Destination

PLEASE CONTACT

9045005700 | 9910322682 | www.sdmotel.com | info@sdmotel.com

2026

January

S	M	T	W	T	F	S
				1	2	3
4	5	6	7	8	9	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	31

February

S	M	T	W	T	F	S
1	2	3	4	5	6	7
8	9	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28

March

S	M	T	W	T	F	S
1	2	3	4	5	6	7
8	9	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30	31				

April

S	M	T	W	T	F	S
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30		

May

S	M	T	W	T	F	S
					1	2
3	4	5	6	7	8	9
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30
31						

June

S	M	T	W	T	F	S
	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30				

July

S	M	T	W	T	F	S
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

August

S	M	T	W	T	F	S
						1
2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29
30	31					

September

S	M	T	W	T	F	S
		1	2	3	4	5
6	7	8	9	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30			

October

S	M	T	W	T	F	S
				1	2	3
4	5	6	7	8	9	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	31

November

S	M	T	W	T	F	S
1	2	3	4	5	6	7
8	9	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30					

December

S	M	T	W	T	F	S
		1	2	3	4	5
6	7	8	9	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30	31		

Hindu Festivals:	
Jan 14	Makar Sankranti/Pongal
Jan 23	Vasant Panchmi
Feb 01	Thaipusam
Feb 15	Maha Shivaratri
Mar 03	Holika Dahan
Mar 04	Holi
Mar19	Ugadi/ Gudi Padwa
Mar 27	Ram Navami
Apr 02	Hanuman Jayanti
Apr 10	Hindi New Year
Apr 14	Vaisakhi / Baisakhi/
Apr 14	Tamil New Year
Apr 15	Bengali New Year/ Bihu
Apr 19	Akshaya Tritiya
May 16	Savitri Pooja
Jul 16	Puri Rath Yatra
Jul 29	Guru Purnima
Aug 17	Nag Panchmi
Aug 26	Onam
Aug 28	Raksha Bandhan
Sep 04	Krishna Janmashtami
Sep 14	Ganesh Chaturthi
Sep 17	Vishwakarma Puja
Oct 10	Mahalaya Amavasya
Oct 11	Navratri Begins
Oct 19	Navratri Ends
Oct 20	Dusshera
Oct 25	Sharad Purnima
Oct 29	Karwa Chauth
Nov 06	Dhan Teras
Nov 08	Diwali
Nov 11	Bhai Dooj
Nov 15	Chhath Puja
Nov 24	Kartik Purnima
Dec 16	Dhanu Sankranti
Dec 20	Geeta Jayanti